छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
हिन्दी मासिक मुख पत्र
माह – कार्तिक–अगहन, संवत् 2076
नवम्बर 2019

ओ३म्

अंक 169, मूल्य 10

अग्निदूत

अग्निं दूतं वृणीमहे. (ऋग्वेद)

क्रांतिकारी भाई
परमानन्द आर्य

महान् दार्शनिक
स्वामी दर्शनानन्द

पंजाब केसरी लाला लाजपत राय

वैदिक ज्ञान योग एवं वैदिक चिकित्सा गुरुकुलम् बड़ेडोंगर(बेड़गांव) कोण्डागांव जिला में सम्पन्न नवप्रवेशित ब्रह्मचारी एवं ब्रह्मचारणियों का उपनयन संस्कार की झलकियाँ

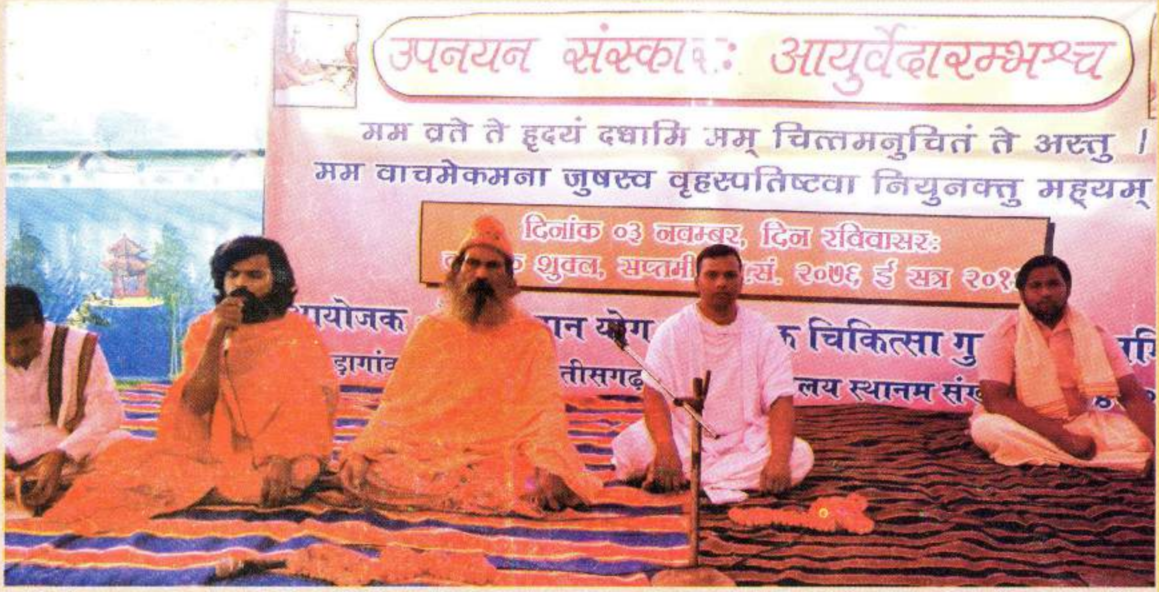

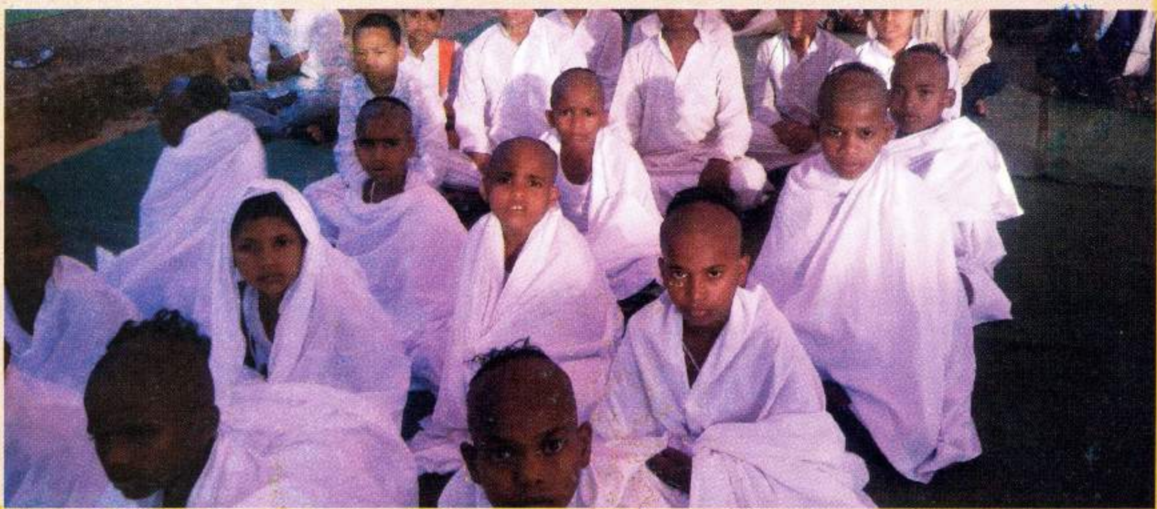

अग्निदूत

हिन्दी मासिक

राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक विचारों की मासिक पत्रिका

विक्रमी संवत् - २०७६
सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,११९
दयानन्दाब्द - १९६

: प्रधान सम्पादक :
आचार्य अंशुदेव आर्य
प्रधान सभा
(मो. ०७०४९२४४२२४)

★

: प्रबंध सम्पादक :
आर्य दीनानाथ वर्मा
मंत्री सभा
(मो. ९८२६३६३५७८)

★

: सहप्रबंध सम्पादक :
श्री चतुर्भुज कुमार आर्य
कोषाध्यक्ष सभा
(मो. 8370047335)

★

: सम्पादक :
आचार्य कर्मवीर
मो. ८१०३१६८४२४

पेज सज्जक :
श्रीनारायण कौशिक

– कार्यालय पता –
छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
दयानन्द परिसर, आर्य नगर, दुर्ग (छ.ग.)४९१ ००१
फोन : (०७८८) ४०३०९७२
फैक्स नं. : ०७८८-४०११३४२ ;
e-mail : chhattisgarhsabha@gmail.com

वर्ष - १५, अंक ४ — ओ३म् — मास/सन् - नवम्बर २०१९

श्रुतिप्रणीत–सिद्धधर्मवह्निरूपतत्त्वकं,
महर्षिचित्त–दीप्त वेद–सारभूतनिश्चयं ।
तदग्निसंज्ञकस्य दौत्यमेत्य सम्रसम्रकम् ,
सभाग्निदूत–पत्रिकेयमादधातु मानसे ।।

विषय - सूची

			पृष्ठ क्र.
१.	तेरे सखा को क्या मिलता है ?	स्व. रामनाथ वेदालंकार	०४
२.	बड़ी जिम्मेदारी है : गुरुजनों की	आचार्य कर्मवीर	०५
३.	महर्षि दयानन्द का राष्ट्रवाद	डॉ. उमाशंकर नगायच	०८
४.	प्रतिदिन यज्ञ करते हुए भी प्रायः लोगों को लाभ क्यों नहीं होता ?	आचार्य आर्यनरेश	११
५.	"वेदों में कोई लौकिक इतिहास नहीं"	खुशहालचन्द्र आर्य	१२
६.	ऋषि दयानन्द के काशी शास्त्रार्थ के प्रत्यक्षदर्शी – पं. सत्यव्रत सामश्रमी	डॉ. भवानीलाल भारतीय	१४
७.	आर्यसमाज और विश्व शांति	डॉ. विजेन्द्रपाल सिंह	१८
८.	जीव अमर है तो हत्या या आत्म हत्या, पाप अपराध क्यों है ?	इन्द्रजीत 'देव'	१९
९.	पंजाब केसरी लाला लाजपत राय	लोचन कुमार आर्य	२१
१०.	"आओ ! आर्यसमाज के सत्संग में चले, जहां जाने से अनेक लाभ होते हैं"	मनमोहन कुमार आर्य	२३
११.	"लहरायेगा लहरायेगा प्यारा झण्डा ओ३म् का"	पं. रघुराज शास्त्री	२७
१२	स्वामी दर्शनानन्द	डॉ. अशोक आर्य	२८
१३.	क्रांतिकारी भाई परमानन्द या पं. परमानन्द	डॉ. विवेक आर्य	२९
१४.	होमियोपैथी से अस्थमा का उपचार	डॉ. विद्याकांत त्रिवेदी	३१
१५.	कविता : "खबरदार"	देवेन्द्र कुमार मिश्रा	३२
१५.	समाचार प्रवाह		३३

सूचना : छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का अणुसंकेत
(ई-मेल) E-mail : chhattisgarhsabha@gmail.com
(सम्पादक) E-mail : shastrikv1975@gmail.com

सूचना : हमारा नया वेब साइट देखें
Website : http:/www.cgaryapratinidhisabha.com

वार्षिक शुल्क-१००/- दसवर्षीय-८००/-

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है।

सम्पादक प्रकाशक मुद्रक – आचार्य अंशुदेव आर्य द्वारा छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग के वैदिक मुद्रणालय से छपवाकर प्रकाशित किया गया।

तेरे सखा को क्या मिलता है ?

वेदामृत

भाष्यकार - स्व. डॉ० रामनाथ वेदालङ्कार

अश्वी रथी सुरूप इद्, गोमाँ इदिन्द्र ते सखा।
श्वात्रभाजा वयसा सचते सदा, चन्द्रो याति सभामुप॥

ऋषिः देवातिथिः काम्वः। देवता इन्द्रः। छन्दः वृहती।

● **(इन्द्र)** हे सम्राद् परमेश्वर! **(ते)** तेरा **(सखा)** सखा **(इत्)** निश्चय ही **(अश्वौ)** प्रशस्त घोड़ों एवं प्रशक्त प्राणोवाला, **(रथी)** प्रशस्त रथ एवं प्रशस्त शरीर-वाला **(सुरुपः)** सुरुप और **(इत्)** निश्चय ही **(गोमान्)** प्रशस्त गौओं, प्रकाश-किरणों, वाणियों, भूखण्डों एवं इन्द्रियोवाला (हो जाता है)। (वह) **(श्वात्र भाजा वयसा)** धन-युक्त अन्न से एवं त्वरित आयु से **(सचते)** संयुक्त होता है (और) **(चन्द्रः)** चन्द्रवत् आह्लादक (होता हुआ) **(सभां)** सभा में **(उप याति)** पहुंचता है।

हे परमेश्वर! तुम इन्द्र हो, अखिल जगत् के सम्राट हो। अतः तुमसे सखित्व स्थापित करने वाले को महान् फल प्राप्त होता है। वह प्रशस्त रथ एवं अश्व से युक्त तो होता ही है, साथ ही उसका शरीर-रुप रथ और उसे चलाने वाला प्राण-रुप अश्व भी प्रशस्त हो जाता है। उसका शरीर-रथ व्याधियों की चोटों से जर्जर न होकर आत्मा-रुप रहता है। हे प्रभु! तुम्हारा सखा सुरुप बन जाता है। उसके अन्दर सज्जनता, माधुर्य, प्रेम, वीरता, परोपकार आदि सद्गुणों का सुन्दर रुप विकसित हो जाता है। वह गोमान् अर्थात् गो शब्द-वाच्य गाय, पशुओं, गोदुग्ध, आध्यात्मिक प्रकाश की किरणों, वाणियों, भूमियों एवं इन्द्रियों का श्रेष्ठ स्वामी हो जाता है। हे परमैश्वर्यवान्! तुम्हारे सखा के पास धन-धान्य की कमी नहीं रहती। उसके पास धन और अन्न के कोठें भरे हुए न भी हों, तो भी आवश्यकता पड़ने पर अन्य लोग अपना अन्न-धन उसके चरणों में करता है, कर्मशूरों का जीवन व्यतीत करता हुआ चिरजीवी होता है।

हे देव! तुम्हारा सखा साक्षात् इन्द्र बन जाता है, चन्द्रमा के समान सौम्य और आह्लादक होता हुआ विद्वत्सभा में, राजसभा में और जनता की सभा में जाता है। सब उसकी सौम्य मूर्ति से, सौम्य वाणी से और सौम्य व्यवहार से प्रभावित होते हैं। उसमें सभा को अपने पीछे चलाने की क्षमता आ जाती है। हे इन्द्र! हे महाराजाधिराज! तुम हमें भी अपना सखा बनाकर उपर्युक्त लाभों से विभूषित करो।

संस्कृतार्थ :- १, २ प्रशंसा में मतुवर्थक इन् प्रत्यय। ३. श्वात्र=धन, शीघ्र (निघं. २.१०.४.२) ४. वयस् =अन्न (निरु. ६.४), लोक में आयु अर्थ प्रसिद्ध। ५. चन्दति आह्लादयति इति चन्द्रः (चदि आह्लादे)।

सम्पादकीय

बड़ी जिम्मेदारी है : गुरुजनों की

सहृदय पाठकों!

यह बात आप सभी अच्छी तरह जानते हैं कि वर्तमान युग में भारत की सब से बड़ी समस्या है नैतिक मूल्यों का ह्रास और इसी कारण हमें आए दिन किसी न किसी संकट से दो-चार होना पड़ता है। चारित्रिक पतन के कारण ही हम अपेक्षित गति से उन्नति नहीं कर पा रहे हैं। हमारी कोई भी योजना ठीक प्रकार से सिरे नहीं चढ़ती और किसी भी समस्या का सही समाधान नहीं हो पाता। हमारी कार्य-विधियाँ भ्रष्ट तरीकों से आक्रान्त हैं। भौतिक समृद्धि की प्रबल कामना और दुर्दान्त महत्वाकांक्षा से प्रेरित होकर हम समाज के व्यापक हितों को ताक पर रख देते हैं और व्यक्तिगत-स्वार्थ सिद्धि के लिए अनेक अनैतिक रास्ते अपनाते हैं। परिणाम हमारे सामने है। हमारा शारीरिक, मानसिक विकास तो रुका ही है, सामाजिक प्रगति में भी गतिरोध पैदा हो गया है। विचार-क्षेत्र में तो हम बहुत पीछे रह गये हैं। इस दुर्दशा के लिए कौन उत्तरदायी है ? देश का आम आदमी अध्यापक को दोषी ठहराता है और यह दोषारोपण कुछ हद तक सही भी है। परन्तु सब बुराईयों का दोष अध्यापक के मत्थे मढ़ कर ही हम अपने दायित्व से मुक्त हो सकते हैं।

अध्यापक के चारित्रिक पतन और उसकी दिग्भ्रान्ति की बात, दो टूक शब्दों में कह देने वाले लोगों की कल्पना में अध्यापक वस्तुतः किसी प्राचीन ऋषि, तत्वदर्शी विचारक, वीतराग महात्मा, भगवद्-भक्त सन्त, समर्पित संन्यासी या किसी काल्पनिक सत्ययुग के किसी प्रतिष्ठित मनीषी का आदर्श रुप होता है। इसके अतिरिक्त वर्तमान युग के अध्यापक की नैतिकता पर अंगुली उठाने वाले लोग उसे समाज का अविभाज्य अङ्ग न मानते हुए ही उसे आम आदमी से कुछ भिन्न रुप में देखने की आशा करते हैं। वास्तव में समाज के भिन्न-भिन्न वर्गों को समन्वित और सामञ्जित रुप में न देख कर, उन्हें किसी सामान्य सम्पर्क-सूत्र से विच्छिन्न अलग-अलग द्वीपों के रुप में देखने की प्रवृत्ति ने ही लोगों को अध्यापक के लिए कुछ भिन्न नैतिक मापदण्ड बनाने की प्रेरणा दी है। उसे बृहत्तर समाज से अलग करके देखने की प्रवृत्ति ने ही उसे एक निर्जीव और जड़ आदर्श-पुंज बना कर म्यूजियम का शो-पीस सा बना दिया है। क्या व्यक्ति को व्यवस्था से अलग करके देखा जा सकता है ? व्यवस्था के जाल में फँसे व्यक्ति के लिए स्वतन्त्ररुप में अपना

विकास करना इतना सरल नहीं होता। जनतन्त्र के इस युग में शिक्षा का व्यापक और अबाध विस्तार होने से, न तो विद्यार्थी में ही कोई विशिष्टता रही है और न अध्यापक में ही। हाड़-मांस के चलते फिरते पुतलों की ऋषियों-मुनियों से तुलना करते रहना न तो न्याय-संगत है और न विवेक-सम्मत ही। आज युग तो बदला ही है, मानसिकता में भी आमूल तथा जनतन्त्र के उदय के साथ-साथ हमारा वैचारिक और सामाजिक परिवेश बिल्कुल बदल गया है। अब हम सब एक धरातल पर ही उतर आये हैं और हमारी आशाएँ-आकांक्षाएँ भी एक जैसी बन गई है। आज का अध्यापक, आज के समाज की उपज है और वह अपने जन्मदाता समाज का अभिन्न अंग है। अध्यापक सामान्यतः वही कुछ है, जो कुछ उसे बनाया गया है और जो कुछ वह बढ़कर कर रहे हैं, वह अपनी बुद्धि और विवेक के कारण है। इन बातों को यों भी कहा जा सकता है कि अध्यापक आज जो कुछ भी है, समाज के कारण से है और जो कुछ नहीं है, वह भी समाज के कारण से है।

आज सहज रुप में ही यह प्रश्न किया जा सकता है कि अध्यापक का निजी व्यक्तित्व क्या कुछ भी नहीं ? उत्तर में हम दो बातें कहेंगे। पहली यह कि आज व्यवस्था ने व्यक्ति को बहुत सीमा तक निर्जीव और अशक्त बना दिया है। अध्यापक इसी व्यवस्था का एक अङ्ग है। इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति से बच निकलने का कोई उपाय नहीं सोचा गया है। व्यवस्था और प्रशासन ने अध्यापक को नैतिक दृष्टि से कमजोर, निष्क्रिय और आलसी बनाया है। कोई भी व्यक्ति जब विचार और व्यवस्था तथा मूल्य और माप में बँधने के लिए मजबूर कर दिया जाता है, तो उसकी अपनी विचार शक्ति कुन्द पड़ जाती है और उसकी चेतना का विकास रुक जाता है। इसका उसके मनोबल और कार्य-क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

हमारे अध्यापक को प्रतिभा का स्वतन्त्र और अबाध प्रयोग करने की न तो सुविधा है और न छूट ही। शिक्षण-विधि, पाठ्यक्रम-निर्माण एवं शिक्षा प्रशासन में उसकी भागीदारी, मशीन के एक छोटे से महत्वहीन पुर्जे से बढ़ कर और कुछ नहीं। राज्य नीति से बाहर जा सकने की छूट न होने के कारण वह अपने विवेक का स्वतन्त्र उपयोग कर पाने में भी असमर्थ है। उसे क्या पढ़ाना है और कैसे पढ़ाना है, यह भी दूसरे ही निश्चित करते हैं। इसका ज्वलन्त प्रमाण है वह शिक्षा-मंच, जिसे **'एड्यूकेटर्स फॉर डेमाक्रेसी, सोशलिज्म एण्ड सैक्यूलरिज्म'** के नाम से पुकारा जाता है और जिसे किन्ही शासकों का आशीर्वाद प्राप्त रहा है। अब तो अध्यापक को प्रचार के साधन के तौर पर इस्तेमाल करने में भी गुरेज नहीं किया जाता। कोई भी सरकारी योजनाएँ आज सरकारी तन्त्र में बगैर अध्यापक के परवान नहीं चढ़ती पारिवारिक सर्वेक्षण से लेकर मतदान तक हर जगह शिक्षक ही इस्तेमाल होते हैं।

हम यह नहीं कहते कि अध्यापक देश-प्रेम का पाठ न पढ़ाएँ। हम तो केवल उसे प्रचार-तन्त्र का पुर्जा मात्र बना दिये जाने की बात कह रहे हैं। देश की अखण्डता और प्रभुसत्ता की रक्षा करना बुरा नहीं, बुरा तो है सरकारी प्रचारतन्त्र का माध्यम बनना, या शासक वर्ग के हाथों की कठपुतली-मात्र बनकर रह जाना। राष्ट्रीय जीवन-धारा में अध्यापक एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, परन्तु जलसा, जुलूस, नारेबाजी और अर्थी जलाना आदि तरीके उसकी प्रबुद्ध मानसिकता और सतत जागरुक संवेदनशीलता के प्रतिकूल पड़ते हैं। इसके अतिरिक्त अध्यापक का इन सब बातों से सीधा सम्बन्ध भी तो नहीं होता।

समाज में परिवर्तन लाने के बहुत से साधन अध्यापक के हाथ में है, परन्तु उसे पहले आत्मनिरीक्षण जरुर

कर लेना चाहिए। उसे देख लेना चाहिए कि वह मनुष्यमात्र की आधारभूत एकता में विश्वास करता है। वह जाति और सम्प्रदाय की जड़ घेरेबन्दी को तोड़ने में समर्थ है। वह संकीर्ण राष्ट्रीयता और उपजातिवाद की आत्मघाती प्रवृत्तियों के प्रति सावधान है। उसकी वैज्ञानिक दृष्टि ने उसके भावनालोक को स्वस्थ और सन्तुलित बना दिया है। वह मध्ययुगीन सामन्ती मानसिकता को तिलाञ्जलि दे कर शोषण और परोपजीविता से मुक्त हो चुका है। यदि अध्यापक वास्तव में विश्वमानव बन गया है, तो वह गुलामी की मानसिकता का चोला उतार फेंकने और मनुष्य जाति को मुक्ति दिला सकने में समर्थ है. परन्तु अपने में इन गुणों का विकास करने के लिए कड़े आत्म-संघर्ष और कष्टसहिष्णुता की आवश्यकता है। धारा के विपरीत चलने की शक्ति के धनी अध्यापक ही समाज का नेतृत्व कठमुल्लाओं के हाथ से छीन सकते हैं। समाज का नेतृत्व अपने हाथ में लेने के लिए उन्हें एक तो अपने आचार और व्यवहार को अनुकरणीय और आदर्श बनाना होगा और दूसरे अपने अध्ययन और अध्यवसाय के बल पर अपने को ज्ञान का भण्डार बनाना होगा। सही ज्ञानऔर सम्यक् आचार से ही अध्यापक समाज में व्याप्त विसंगतियों, विरोधाभासो एवं हर प्रकार की विषमताओं को मिटा सकता है।

जड़ता हमारी सबसे बड़ी कमजोरी है। इसी का दूसरा नाम है यथास्थितिवाद। किसी भी नयी बात के लिये हम कह देते हैं कि यह चल नहीं पाएगी। साम्राज्यवादी शक्तियाँ कहती हैं कि उनके अधीन देश स्वशासन का सामर्थ्य नहीं रखते। नारी-मुक्ति के विरोधी आज भी उसे पुरुष के बराबर की भागीदारी बनने के योग्य नहीं मानते। 'मार्शल रेस' की धारणा आज भी कुछ जातियों के **'अहं'** को दीप्त किए हुए हैं और समाज में विकृति पैदा कर रही है। आज भी देश में बहुत से ऐसे लोग हैं, जो अंग्रेजी की प्रभुसत्ता बनाए रखने में ही देश की भलाई समझते हैं। स्वदेशी भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाने को वे आत्महत्या-तुल्य मानते हैं। जबकि पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने कहा था - जीवन में जो भी मैने सफलता पाई उसके पीछे बाल्यकाल में अपनी मातृभाषा में आरम्भिक शिक्षा ही है। हमारे यहां हर गलत बात को किसी ऊँचे सिद्धान्त का जामा पहनाया जाता है और हर गलत अभियान को कोई नेक-सा नाम दिया जाता है। हमारा नेतावर्ग और सर्वोच्च शासक समुदाय देश और समाज की ज्वलन्त समस्याओं से बड़ी चतुराई से कन्नी काट जाता है। यह यथास्थितिवाद से उत्पन्न जड़ता है। अध्यापक इसे तोड़ सकता है, यदि वह समाज के प्रति प्रतिबद्ध है। परन्तु ऐसा करने के लिए उसे 'न्यूट्रल गियर' से निकलना होगा और समयगत सच्चाईयों से जुड़ना होगा।

समाज और मानव-हितों के प्रति प्रतिबद्धता अध्यापक के चरित्र को दृढ़भित्ति प्रदान कर सकती है। यह प्रतिबद्धता हमारे संकल्प को दृढ़ करती है और चरित्र को शक्ति प्रदान करती है। मशीन में शक्ति तभी आती है जब उसे गियर में डाला जाता है। प्रतिबद्धता मशीन को गियर में डालने के समान है, परन्तु बहुत जागरुक व्यक्ति ही अपनी प्रतिबद्धता को सही दिशा दे सकता है। यह प्रतिबद्धता जरा-सी असावधानी से एक व्यक्ति, वर्ग, समूह या सम्प्रदाय के प्रति अन्ध भक्ति में परिणत होकर मानवाधिकारों का हनन करने लगती है। अतः आइये ! हम सब मिलकर राष्ट्र को नवनिर्माण की दिशा में ले जाने के लिये समन्वित प्रयास करें। आज आवश्यकता है कि शिक्षक अपना वास्तविक कर्त्तव्य पहचान कर पूरे समाज को नैतिक एवं चारित्रिक शक्ति से सम्पन्न बनाने की दिशा में ठोस एवं योजनाबद्ध प्रयास करें, जिससे भारत पुनः विश्व गुरु के गौरव को पा सके।

– आचार्य कर्मवीर

ऋषि चिन्तन
महर्षि दयानन्द का राष्ट्रवाद

- डॉ. उमाशंकर नगायच

भारतीय पुनजार्गरण काल के समाज सुधारकों एवं महापुरुषों में महर्षि दयानन्द का अप्रतिम स्थान है। **महर्षि दयानन्द वर्तमान युग में भारत के लिये स्वराज्य, स्वसंस्कृति, स्वदेशी एवं स्वभाषा के प्रथम स्वप्नदृष्टा थे।** भारतीय स्वतंत्रता संग्राम तथा स्वराज्य के अभियान में वे दादाभाई नौरोजी, लोकमान्य तिलक, विवेकानन्द, मदनमोहन मालवीय तथा महात्मा गांधी आदि नेताओं के अग्रणी समाज सुधारक एवं जन नेता थे। **महर्षि दयानन्द स्वराज्य के सर्वप्रथम उद्घोषक एवं संदेश वाहक थे।** अतः स्वदेशी, स्वराज्य, स्वसंस्कृति एवं स्वराष्ट्रगौरव संबंधी उनके अग्रगामी चिन्तन एवं भरतीय स्वतंत्रता संग्राम तथा स्वराज्य के अभियान में उनके योगदान को ध्यान में रखते हुए उन्हें राष्ट्रपितामह कहा जा सकता है। महर्षि दयानन्द के राष्ट्रवादी विचारों के संबंध में डॉ. सत्यदेव विद्यालंकार लिखते है "ऋषि दयानन्द इस देश के निवासियों में इसी राष्ट्रीय भावना को और इसी राष्ट्रवाद को जगाना चाहते थे। उनके आराध्य देव ईश्वर की राजा, महाराजा और महाराजाधिराज तथा सम्राट आदि नामों से आराधना करने की सुन्दर एवं उत्कृष्ट परम्परा के सूत्रपात करने से भी उनकी राष्ट्रीय भावना का प्रत्यक्ष परिचय मिलता है।"

अंग्रेजों की दासता में जकड़े हुए देश में राष्ट्रीय स्वाभिमान तथा स्वराज्य की भावना से युक्त राष्ट्रवादी विचारों की शुरुआत करने तथा अपने कृत्यों एवं उपदेशं से निरन्तर राष्ट्रवाद को पोषित करने वाले महर्षि दयानन्द को ही आधुनिक युग में भारतीय राष्ट्रवाद का जनक कहना उपयुक्त होगा। स्वामी दयानन्द के राष्ट्रवादी चिन्तन के संबंध में पाश्चात्य विद्वान् मैक्समूलर ने कहा है "दयानन्द **की धार्मिक शिक्षाओं में भी सशक्त राष्ट्रीय अनुभूति है।"** इस विषय में डॉ. लालसाहब सिंह लिखते है "स्वामी दयानन्द के राष्ट्रवाद विषयक सुदृढ़, स्वसंस्कृति, स्वदेश, स्वराज्य एवं स्वभाषा के उपासक थे। उन्होंने भारत के गौरवशाली अतीत के पुनराख्यान द्वारा भारतीयों के लुप्तप्राय आत्मविश्वास, आत्मावलम्बन, आत्म गौरव, आत्मनिर्भरता एवं अस्मिता को उद्बुद्ध कर वेदों द्वारा स्वतंत्रता, समानता, भ्रातृत्व एवं न्यास का संदेश दिया है। दयानन्द समग्र रूप में भारतीय राष्ट्रवाद के जनक हैं।" महर्षि दयानन्द के राष्ट्रवाद के प्रमुख सोपान हैं - स्वदेश, स्वराज्य, स्वभाषा एवं स्वधर्म।

स्वामी दयानन्द के हृदय में स्वदेश अर्थात् अपनी मातृभूमि आर्यावर्त देश का सर्वोपरि समान था। सत्यार्थप्रकाश ग्यारहवें समुल्लास में उन्होंने अपने देश प्रेम को प्रकट करते हुए लिखा है यह आर्यावर्त देश ऐसा है, जिसके सदृश भूगोल में दूसरा देश नहीं है। इसीलिए इस भूमि का नाम सुवर्णभूमि है, क्योंकि यह सुवर्णादि रत्नों को उत्पन्न करती है। जितने भूगोल में देश हैं, वे सब इसी देश की प्रशंसा करते और आशा रखते हैं कि पारसमणि पत्थन सुना जाता है, वह बात तो झूठी है, परन्तु आर्यावर्त देश ही सच्चा पारसमणि है कि जिसको लोहे रूप दरिद्र विदेशी छूते के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं। महर्षि ने स्वदेश भक्ति न होने के कारण ब्राह्मसमाजियों एवं प्रार्थनासमाजियों को धिक्कारा है। प्रार्थनासमाजियों और ब्राह्मणसमाजियों की इस विषय में तीखी आलोचना करते हुए वे अत्यंत वेदना और व्यथा के साथ लिखते हैं कि इन

लोगों में स्वदेश भक्ति बहुत न्यून है। भला जब आर्यावर्त देश में उत्पन्न हुए हैं और इसी देश का अन्न-जल खाया-पिया, अब भी खाते-पीते हैं, अपने माता-पिता व पितमहादि के मार्ग को छोड़ दूसरे विदेशी मतों पर अधिक झुक जाना... एतद्देशस्थ संस्कृत विद्या से रहित अपने को विद्वान् प्रकाशित करना, इंग्लिश भाषा पढ़के पण्डिताभिमानी होकर झटिति एक मत चलाने में प्रवृत्त होना, मनुष्यों का स्थिर और बुद्धिकारक काम क्यों कर हो सकता है ? स्वदेश, स्वभाषा, स्वधर्म और अपने पूर्वजों के प्रति प्रेम, गौरव एवं स्वाभिमान का भाव महर्षि के विचारों में पदे-पदे छलक रहा है। महर्षि दयानन्द के स्वदेशी संबंधी विचारों को स्वतंत्रता संग्राम के स्वदेशी आन्दोलन का आधार सूत्र बताते हुए भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने लिखा .. *"स्वामी दयानन्द ने अपनी आश्चर्यजनक भविष्यदर्शी दृष्टि द्वारा हस्तनिर्मित वस्त्रों एवं अन्य स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग का जो विचार प्रस्तुत किया, उसे ही पचास वर्ष के पश्चात् महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता संग्राम का एक मुख्य मुद्दा बनाया।"*

'स्वराज्य के विषय में महर्षि दयानन्द के विचार अत्यंत क्रान्तिकारी थे। उन्होने ही **आर्यावर्त आर्यों के लिये है'** का उद्घोष किया जो कालान्तर में **'भारत भारतीयों के लिये है,'** के रूप में स्वतंत्रता संग्राम का ध्येयसूत्र बना। महर्षि ने अपने ग्रंथों एवं प्रवचनों में स्वराज्य के संबंध में अत्यंत स्पष्ट विचार व्यक्त किये हैं। सत्यार्थ प्रकाश अष्टम समुल्ला में लिखे गये ये शब्द भारत की स्वाधीनता के इतिहास में अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं यथा अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी, किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतंत्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है सो भी विदेशियों से पादाक्रान्त हो रहा है। कुछ थोड़े राजा स्वतंत्र है। दुर्दिन जब आता है, तब देशवासियों को अनेक प्रकाश का दुःख भोगना पड़ता है। कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मतमतान्तर के आग्रह-रहित, अपने और पराये का पक्षपातशून्य, प्रजा पर पिता-माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है। परन्तु भिन्न-भिन्न भाषा, पृथक-पृथक शिक्षा, अलग-अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है। बिना इसके छूटे परस्पर का पूरा उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना कठिन है। इसलिए जो कुछ वेदादि शास्त्रों में व्यवस्था के इतिहास लिखे हैं, उसी को मान्य करना भद्रपुरुषों का काम है। इस प्रकार दयानन्द के समूचे राजनीतिक दर्शन का आदर्श 'स्वराज्य' है तथा राज्य, सभा, अमात्य आदि राज्य के सभी अंग उसके साधन है।

महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रंथ 'आर्याभिविनय' में ईश्वर से प्रार्थना करते हुए अपने देश की स्वतंत्रता और स्वराज्य की मांग की है। उन्होने कहा "अन्य देशीय राजा हमारे देश में कभी न हों तथा हम लोग पराधीन कभी न हों।" तथा .... हे कृपासिन्धों भगवान्! हम पर सहाय करो, जिससे सुनीतियुक्त होके हमारा स्वराज्य अत्यंत बढ़े। इन प्रार्थनाओं में महर्षि का सन्देश प्रेप तथा स्वराज्य के लिये उनकी उत्कृट अभिलाषा स्पष्ट दिखायी देती है। महर्षि दयानन्द ने अपने राष्ट्रवादी विचारों के तारतम्य में स्वराज्य से बहुत आगे बढ़कर **आर्यों के सर्वतंत्र स्वतंत्र चक्रवर्ती साम्राज्य** की स्थापना का भी विचार प्रस्तुत किया है।

महर्षि ने आर्य भाषा (हिन्दी भाषा) को देश की राष्ट्रभाषा बनाने के लिये भी बहुत प्रयत्न किये। उन्होने अपने अधिकांश ग्रंथ हिन्दी भाषा में लिखे और देशभर में अपने उपदेश, प्रवचन हिन्दी भाषा में ही दिये। स्वधर्म के रूप में महर्षि दयानन्द ने विशुद्ध वैदिक धर्म की अवधारणा को पुनरुज्जीवित कर समाज में धर्म के नाम पर प्रचलित पाखण्डों का खण्डन किया और सच्चे धर्म का स्वरूप सभी के सामने उपस्थित किया।

स्वामी दयानन्द ने राष्ट्रवादी विचारों की व्याख्या करते हुए डॉ. लालसाहब सिंह लिखते हैं स्वामी दयानन्द के राष्ट्रवाद के विविध आयामा-स्वदेशी, स्वभाषा (हिन्दी), स्वधर्म (वेदवाद), स्वराज्य तथा चक्रवर्ती आर्य राज्य के विस्तृत विवेचन के पश्चात् यह स्पष्ट होता है कि उन्नीसवीं शताब्दी के भारतीय पुनजार्गरण काल के समाजसेवी तथा

धर्माचार्य जहाँ लोकैषणा और आत्मचिंतन तक ही सीमित थे, वहीं दयानन्द ने मातृभूमि की दुर्दशा से द्रवित होकर उसके कल्याण और मुक्ति हेतु सार्थक चिन्तन प्रस्तुत किया है । उन्होंने भारतीय राष्ट्रवाद को जागृत करने के लिये अपने ब्रह्मसुख का परित्याग कर दिया । उनके लिए राष्ट्रमुक्ति ही परम धर्म था । एक संन्यासी द्वारा इस प्रकार का चिन्तन अभूतपूर्व था । उनके राष्ट्रवादी चिन्तन की सर्वप्रमुख विशेषता भारतीयता थी । इसी से प्रभावित होकर मुंशी प्रेमचन्द ने कहा था कि दयानन्द भारतीयता का अवमूल्यन नहीं करना चाहते थे । भारत का शव पर प्रगतिवाद एवं पश्चिम के डिजाइन का भवन वे सहन नहीं कर सकते थे । दयानन्द के लिये आर्य जाति चुनी हुई जाति, भारत चुना हुआ देश और वेद चुनी हुई धार्मिक पुस्तक थी । इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि दयानन्द विशुद्ध भारतीय राष्ट्रवाद के जनक थे ।

इस प्रकार महर्षि दयानन्द ने स्वदेश, स्वधर्म, स्वभाषा और स्वराज्य की अवधारणाएँ प्रस्तुत कर भारतीयों में स्वाभिमान की भावना का प्रबलता से संचार किया । उन्होंने भारत के गौरवशाली अतीत की अत्यन्त प्रबल और प्रेरणास्पद व्याख्या प्रस्तुत कर भारतीयों में अभूतपूर्व आत्मसम्मान एवं राष्ट्रगौरव की भावना उत्पन्न कर दी ।

पता : ई-११७/६, शिवाजीनगर, भोपाल (म.प्र.)

कविता

आशावादी बनो

आशा मनुष्यों के लिए भगवान का वरदानहै ।
प्रेरणा है कार्य करने की, विद्यार्थी गान है ॥
योगदायी शक्ति है व्यक्तित्व के उत्थान में ।
कर्म में रूचिमय प्रवृत्ति इसी से आसान है ॥
बिनु प्रवृत्ति के सफलता कार्य में मिलती नहीं ।
फूल बनने की प्रवृत्ति बिनु कली खिलती नहीं ॥
सफलता के सूत्र विकसित ही नहीं होते अगर ।
सफलता की कामना की आश मन पलती नहीं ॥
आस्था की जन्मदात्री , जिन्दगी का प्राण है ।
प्रेरणा है कार्य करने की, विधायी गान है ॥
यदि निराशा पंगुता देती सुहानी जिन्दगी को ।
या हताशा मौत बनके निगलने आती खुश को ॥
तो सुधा-संजीवनी आशा पिला नव चेतना की ।
मौत के मुख से पुनश्च छीन लाती हर खुशी को ॥
अस्तु आशा जिन्दगी, जिन्दादिली का भान है।
हर चुनौती में निडरता की अनोखी शान है ॥
संवर पाता नहीं जीवन सुखद आशा के बिना ।
सफलता-संकल्प न पाते कभी आशा के बिना ॥
हर निराशा-तिमिर पथ में दीप आशा का जलाओ ।
हौसला होगा बुलंदित, जोश होगा चौगुना ॥
विश्व की समृद्धि का इतिवृत्त इसी का गान है ।
प्रेरणा है कार्य करने की विधायी गान है ॥

– दयाशंकर गोयल
पता - १५५४-डी, सुदामा नगर, इंदौर - ४५२००९ (म.प्र.)

ईश्वर की आज्ञा में वर्तमान हुए मनुष्य लोग शरीर आत्मा को सुखों को निरन्तर प्राप्त होते हैं । इसी प्रकार युक्ति से सोम आदि ओषधियों के सेवन से उन सुखों को प्राप्त होते हैं, परन्तु आलसी मनुष्य नहीं । महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद भावार्थ ३.५६

विचारात्मक

प्रतिदिन यज्ञ करते हुए भी प्राय: लोगों को लाभ क्यों नहीं होता ?

– आचार्य आर्यनरेश,
वैदिक गवेषक

'महर्षि देव दयानन्द सरस्वती' वर्तमान युग के प्रथम ऐसे वैज्ञानिक थे, जिन्होंने आज से लगभग १२५ वर्ष पूर्व यज्ञ हवन को वेद की छाया में संसार के सभी जड़ व चेतन पदार्थों हेतु सर्वाधिक लाभकारी वैज्ञानिक सुकर्म कहा। स्व. कालजयी क्रान्तिकारी ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के ३ समु. में यज्ञ पर शंकर के उत्तर में लिखते हैं कि यदि तुम **'पदार्थ विद्या'** जानते तो कभी यज्ञ का विरोध न करते। पदार्थ विद्या से अभिप्राय उन रासायनिक क्रियाओं से है जिसका अध्ययन कैमिस्ट्री इक्वेशनों के द्वारा किया जाता है। कहने का मूल अभिप्राय यह है कि **'वैदिक यज्ञ'** एक वैज्ञानिक क्रिया है। इसके द्वारा पूर्ण-लाभ अथवा शीघ्र लाभ तभी हो सकता है, जब हम इसे ठीक उसी प्रकार से करें जैसे कि देव दयानन्दादि ऋषियों ने वेद व शास्त्र के अनुसार इसका निर्देश किया है। यदि हम इसे अपनी मनचाही इच्छा से एवं मनचाहे साधनों एवं विधि से करते हैं तो इससे हानि होती है, लाभ कम होता है अथवा होता ही नहीं। इसके मुख्य कारण निम्नलिखित है

(१) सबसे बड़ी त्रुटि गलत माप ऋषि आज्ञा से विरुद्ध हवनकुण्ड का चयन। देव दयानन्द सरस्वती संस्कार विधि व सत्यार्थ प्रकाश में हवन कुण्ड का परिमाण लिखते हुए संकते करते हैं कि जितना ऊपर से चौड़ा, उतना ही गहरा एवं उस चौड़ाई से चौथाई भाग पेंदे वाला। अर्थात् यदि ऊपर से १२" इंच है, तो गहरा १२" व पेंदें में ३"X ३" होना चाहिए। 12X6X4 तर्क विज्ञान शील बुद्धिजीवी आर्यों को अपना कोई भी कार्य शास्त्र विरुद्ध न करना चाहिए। कुण्ड जितनी अच्छी धातु का होगा उतना अधिक लाभ होगा। पहले प्रकार के ऋषि निर्दिष्ट कुण्ड में जड़ीबूटियों को वाष्प रुप में लाने हेतु ज्वलन क्रिया में भीतर ६००° से ऊपर १३००° तक तापमान पहुंच जाता है। जिससे प्रत्येक पदार्थ कम्बश्चन क्रिया द्वारा उचित लाभ पहुंचाता है। ऐसे कुण्ड में लाभ पूर्ण लेने हेतु छिद्र करने की कभी भूल न करनी चाहिए। छिद्र करने से ताप मान कम हो सकता है तथा कुण्ड शीघ्र टूट जाता है एवं सामग्री व घृत बाहर भी गिर जाते हैं। जो लोग जलने की सुविधा हेतु छिद्र करने की बात करते हैं वह नितान्त तर्कहीन व गलत है, क्योंकि जब कुण्ड घरों व समाज भवनों की यज्ञशालाओं में धरती के भीतर बनता है तब भी तो अग्नि बहुत अच्छी प्रकार से जलती है। अपितु धरती वाला कुण्ड अधिक लाभकारी होता है, क्योंकि उसमें आहुत की गई विभिन्न रोगनाशक प्राकृतिक जड़ी-बूटियां सूक्ष्म होकर घर के नीचे वाली भूमि को भी स्वस्थ रखती है, जिससे इससे दीमक आदि का भी भय नहीं रहता। आजकल दीमक का उपचार करने वाले जहां जानलेवा रासायनिक औषधियों को खिड़की, किवाड़ों व अलमारियों में लगाते हैं वहां इसके साथ-साथ भवन के चारों ओर की धरती में भी लगाते हैं। यदि आप के पास अपना घर है अथवा बनाने जा रहे हैं तो यज्ञ कुण्ड धरती में ही तीन मेखला वाला बनायें। पक्का हवन कुण्ड आपकी पक्की ईश्वर वेद व ऋषि भक्ति का भी परिचायक है। यह आपके परिवार को आपके पश्चात् भी पक्का ईश-वेद भक्त बनने की व दैनिक यज्ञ के करने की प्रेरणा देकर 'आर्य' बनाए रखेगा। यदि आपके पीछे पुत्र-पुत्रवधु व पौत्र आलस्यवशात् छोड़ भी देंगे तो आने वाले आर्यातिथिजन उन्हें आप द्वारा बनाए गए कुण्ड को स्मरण करवा कर पुनः परिवार सहित मिलकर संध्या हवन व वेदपाठ करने की प्रेरणा देगा।

पता : उद्‌गीथ साधना स्थली, आर्य शिखर, वेद सदन, ओमवन महर्षि दयानन्द मार्ग, हिमाचल प्रदेश-१७३१०१

गवेषणात्मक

"वेदों में कोई लौकिक इतिहास नहीं"

- खुशहालचन्द्र आर्य

वेदों में अनेक पदों से यह भ्रम होता है कि उनमें ऐतिहासिक स्त्री-पुरुषों, ऋषि-मुनियों, नगरों, नदियों, पर्वतों के नाम है। जिन्हें देखकर प्रायः विद्वान् कह देते हैं कि वेदों में लौकिक इतिहास है। पाश्चात्य संस्कृतज्ञ ही नहीं वेदों को स्वतः प्रमाण मानने वाले भारतीय वेद भाष्यकार सायणाचार्य आदि भी वेदों में लौकिक इतिहास को स्वीकार कर लेते हैं। ऐसा वेद के शब्दों को रुढ़ि मान बैठने से होता है। जबकि वास्तव में वे सभी आचार्यों के मत में यौगिक है। कालान्तर में उनके अर्थ विशेष में सीमित हो जाने पर वे रूढ़ होने लगे। वेदों में अनित्य इतिहास अर्थात् किसी व्यक्ति या जाति विशेष का उल्लेख नहीं है। ईश्वरीय ज्ञान का प्रादुर्भाव मानव उत्पत्ति के साथ ही होता है, अतः उसमें मानव इतिहास नहीं हो सकता, क्योंकि इसके पूर्व मानव उत्पत्ति नहीं होने से इतिहास सृजित ही नहीं हुआ था। सृष्टि के आदि में जब ज्ञान का एकमात्र आधार वेद ही था और मनुष्यों के व्यवहार की एकमात्र भाषा वैदिक भाषा थी, वह मनुष्यों द्वारा रखे गये पदार्थों के नाम वैदिक नामों से भिन्न कैसे हो सकते थे?

इस विषय में मनु महाराज लिखते हैं :-

सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक्-पृथक्।
वेद शब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थाश्च निर्ममे ॥

(मनु. २/२९)

सृष्टि के आदि में ज्ञान देते समय परमेश्वर ने सब पदार्थों के नाम, कर्म आदि बता दिये। उन्हीं नामों का लोग प्रयोग करने लगे। यौगिक प्रक्रियानुसार वैदिक शब्दों के भिन्न-भिन्न अर्थ हो जाते हैं। इस प्रकार से लोक में नाम आये, लोक से वेद में नहीं गये। वेद का इन ऐतिहासिक व्यक्तियों से कोई सम्बन्ध नहीं है।

वेद में लौकिक इतिहास मानने पर वेद को अनित्य मानना पड़ेगा, इससे ईश्वर में भी पक्षपात की सिद्धि होगी। यौगिक प्रक्रियानुसार अर्थ होने पर वेद का कोई भी शब्द व्यक्ति या स्थान विशेष का वाचक नहीं रहता। जहाँ ऐसा प्रतीत होता है, वहां प्राकृतिक जगत् के कारण तथा कार्यरुप तत्वों का औपचारिक वा अलंकारिक वर्णन होता है। इस विषय में मीमांसा भाष्यकार शब्द स्थायी लिखते हैं- यह इतिहास जैसा प्रतीत होता है (वास्तव में है नहीं) यदि इतिहास माना जाये तो वेद को सादि अथवा अनित्य मानना पड़ेगा। परन्तु ऐसा नहीं है।

वेदों में लौकिक इतिहास लेशमात्र भी नहीं है - इस तथ्य को स्थापित करने का श्रेय महर्षि दयानन्द सरस्वती को जाता है। वेद में अर्जुन, द्रौपदी, राम, कृष्णा, सीता आदि ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम गंगा, यमुना, सरस्वती आदि नदियों के नाम, अयोध्या नगर आदि नाम अवश्य पाये जाते हैं, परन्तु वेद में इन लौकिक नामों से किंचित मात्र भी सम्बन्ध नहीं है। वेद के सभी शब्द यौगिक है, आदिकाल में संस्कृत के समस्त नामपद यौगिक धातुज माने जाते थे। धात्विक अर्थों के अनुसार प्रकरणानुसार इनका अर्थ भिन्न हो जाता है।

उदाहरणार्थ : **"यो यमुना यजति गोमतीषु"** (ऋ. ४/२२/४) अर्थात् जो वायुद वारा गोमती में होम करता है। **"सरस्वती यां पितरो हवन्ते"** (ऋ. १०/२७/५) अर्थात्- उस सरस्वती को जिसमें पितर हवन करते हैं।

उपर्युक्त ऋग्वेद के दोनों मन्त्रों गोमती और सरस्वती नदियों के नाम नहीं है, अपितु यज्ञ और हवन से सम्बन्ध रखने वाले नाम है। इसलिए स्पष्ट ही वे किरण के बोधक है।

अम्बे, अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन।
ससस्त्यश्वकः सुमाद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ॥

(यजु. २३/१८)

इस मन्त्र में वर्णित अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका तीनों महाभारत के काशीराज की कन्याएँ नहीं

है, जिन्हें भीष्म उठा ले गये थे। अपितु यहां अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका माता, दादी और परदादी के वाचक है।

वैदिक काल में महाराज मनु के वंशजों ने सरयू नदी के तट पर अयोध्या नगरी का निर्माण किया था, वेद के शब्द से ही उसका नाम रखा था।

"अष्टचक्रानवद्वारा देवानां पूरयोध्या।"

(अर्थ. २०/२/३२.३२)

इस मन्त्र में शरीर को ही देवताओं की नगरी बताया है जिसमें आठ चक्र और नौ द्वार है। **"नवद्वारे पुरे देही"** (गीता) अर्थात् जिसमें देही (आत्मा) निवास करता है। इससे ज्ञात होता है कि वेदादिशास्त्रों में शरीर रुपी नगरी का नाम अयोध्या है। **"कृष्णा याः पुत्रोऽर्जुन"** (अर्थ. २३/३/२६) वेद के इस मन्त्र में अर्जुन को द्रौपदी (कृष्णा) का पुत्र बताया है।

शतपथ ब्राह्मण के अनुसार "रात्रिर्वै कृष्णा, असावादित्यत्तस्या वत्सौऽर्जुनः" यहां वेद और ब्राह्मण ग्रन्थ दोनों में कृष्णा (द्रौपदी) नाम रात्रि का है और उससे उत्पन्न होने के कारण आदित्य अथवा दिन (अर्जुन) उसका पुत्र है। इस प्रकार यहाँ द्रौपदी (रात्रि) और अर्जुन (दिन) को महाभारत की द्रौपदी और अर्जुन का वाचक नहीं माना जा सकता।

उपर्युक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि वेद में अनित्य इतिहास अर्थात् किसी व्यक्ति या जाति विशेष का उल्लेख नहीं है। जिस वेदार्थ से वेद में लौकिक इतिहास का संकेत मिलेगा वह वेद की मूल भावना का द्योतक होगा। वेद से भिन्न अन्य धार्मिक ग्रन्थों में लौकिक इतिहास, भूगोल पाया जाता है। इसलिए उन्हें ईश्वरीय रचना नहीं कहा जा सकता है। उदाहरणार्थ :-

बाईबल - बाबुल के राजा नबूखुदनजर के राज्य के उन्नीसवें बरस के पांचवे मास सातवीं तिथि में बाबुल के राजा का एक सेवक नबूसर अद्दान जो निज सेना का प्रधान अध्यक्ष था। यरुसलम में आया और हर एक बड़े घर जला दिया। (तौ.रा.प. २५/आ.०८-२०)।

कुरान - जब युसूफ ने अपने बाप से कहा कि ऐ बाप मेरे! मैने एक स्वप्न देखा। (मं. ३/सि.२२/सू.२२/आ.४-५२) हमने इस कुरान को अरबी में नाजिल किया है, ताकि तुम समझ सको।

दूसरी आयत से लगता है कि खुदा का कुरान का मुख्य उद्देश्य केवल अरबवासियों का सुधार करना था। अरबी भाषा निश्चित रुप से एक देश विशेष की भाषा है। देश-विदेश की भाषा में ईश्वरीय ज्ञान देने से ईश्वर पर पक्षपात का आरोप लग सकता है। परन्तु न्यायकारी परमपिता परमेश्वर ने वेद रुपी ज्ञान संस्कृत भाषा में प्रदान किया जो मूलरुप से सबकी भाषा थी।

बाइबल और कुरान में लौकिक इतिहास के अनेक उदाहरण मिलते हैं। जबकि हम कह सकते हैं कि वेदों में लौकिक इतिहास नहीं है। यहां यह बात सामने की है कि इस लेख में रुढ़ और यौगिक शब्द कई बार आये हैं। इनके क्या अर्थ हैं, यह हमकों जानना उचित है। रुढ़ या रूढ़िवाद शब्द का अर्थ है, जैसा शब्द है उसका वैसा ही अर्थ लगा लेना और यौगिक शब्द का अर्थ होता है, उसके आगे-पीछे के प्रकरणानुसार अर्थ लगाना, जिसके काफी अर्थ निकल सकते हैं। वेदों में अधिकतर यौगिक शब्दों का ही प्रयोग हुआ है। उनका भाष्यकारों ने रूढ़ी अर्थ लगा लिया, इसी से अर्थ का अनर्थ हुआ है।

पता - १८०, गोविन्दराम अण्ड संस, महात्मा गांधी रोड, (दो तल्ला), कोलकाता-७०००७

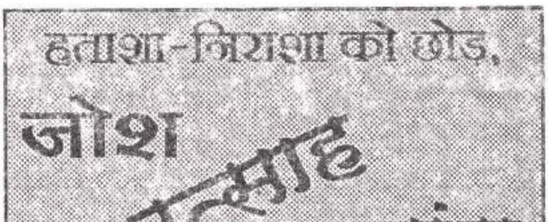

ऋषि दयानन्द के काशी शास्त्रार्थ के प्रत्यक्षदर्शी – पं. सत्यव्रत सामश्रमी

काशी शास्त्रार्थ के १५०वें वर्ष के उपलक्ष्य में आयोजित स्वर्ण शताब्दी वैदिक धर्म महासम्मेलन के परिप्रेक्ष्य में

- डॉ. भवानीलाल भारतीय

स्वामी दयानन्द का काशी के विद्वानों से मूर्तिपूजा पर प्रसिद्ध शास्त्रार्थ १६ नवम्बर १८६९ (मंगलवार) को दुर्गाकुण्ड के निकट आनन्द उद्यान (अमेठी राजा का बाग) में हुआ था। इसका विवरण तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ था। इलाहाबाद के पायोनियर, कलकत्ता के हिन्दू पैट्रियट ब्रह्मसमाज की पत्रिका तत्वबोधिनी, रुहेलावाद समाचार (उर्दू) आदि पत्रों ने शास्त्रार्थ विवरण को अपनी अपनी टिप्पणियों सहित प्रकाशित किया था। रूअेल्फ हार्नले नामक एक जर्मन संस्कृतज्ञ ने क्रिश्चियन इन्टैलिवेन्सर नामक पत्र (मार्च १८७०) में शास्त्रार्थ का आंखों देखा विवरण विस्तार से छापा।

शास्त्रार्थ स्थल पर शास्त्रार्थ हेतु जिन काशीस्थ विद्वानों की उपस्थिति देखी गई उनमें से अनेक विद्वानों की सूची स्वामी दयानन्द के जीवनी-लेखकों ने दी है। इनमें से एक थे पं. सत्यव्रत सामश्रमी, एक बंगाली विद्वान् जिन्हें स्वयं उनके ही कथानुसार उभयपक्ष सम्मत शास्त्रार्थ का विवरण लेखक मनोनित किया गया था। अपने ऐतरोपालोचनम् नामक ग्रन्थ में इस सम्बन्ध में सामश्रमी जी ने लिखा था - **"परमहोकाश्यानन्दोद्यानविचारे यत्र वयमास्म मध्यस्थाः विशेषतो वादि प्रतिवादि वचसामनुलेखनेऽहमेक एवोभयपक्षतो नियुक्तः"** (पृ. १२७) इन्हीं सामश्रमी स्वसम्पादित संस्कृत मासिक पत्रिका प्रत्यकम्र नन्दिनी (दिसम्बर १८६९) में शास्त्रार्थ का विस्तृत वर्णन प्रकाशित किया था। पं. सत्यव्रत सामश्रमी का विस्तृत परिचय हिन्दी के विख्यात लेखक पं. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी ने दिया है।

सामश्रमी जी के पिता श्रीराम भट्टाचार्य (रामबाबू) ने ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासनकाल में लिपिक के पद पर कार्य किया था। नौकरी से अवकाश लेकर वे पेंशनयाफ्ता से काशीवासी बन गये। १८४६ में उनके जो पुत्र हुआ उसका नाम पहले कालिदास रखा, परन्तु बाद में उसे सत्यव्रत नाम दिया गया। यों तो बंगाल विद्वता, शिक्षा तथा पाण्डित्य की भूमि रही है, किन्तु उन्नीसवीं शताब्दी में यहां संस्कृत अध्यापन ऋषि प्रणाली को छोड़कर साम्प्रदायिक अध्ययन सराणि पर चल पड़ा था। गुलेरी जी के शब्दों में व्याकरण की बात करें तो पाणिनि के घण्टापथ राजपथ को छोड़कर मुग्धबोध, कानत्र और कलाप के आपातरमणीय मार्ग का अनुसरण कर रहा था। वर्णाश्रम धर्म रुपी फल फूल के मूल वेद को लोग भूल गये थे। देशभर में नव्य-न्याय की श्रवण कटु काक भाषा और तांत्रिक धर्म फैला हुआ था। मीमांसा तथा स्मृतियों के स्थान पर कल्पित निबंधों का प्रचलन हो गया था और अद्वैत वेदान्त के शुद्ध श्वेत मार्ग पर मेघवर्ण नव वैशाख-धर्म की कुञ्झटिका फैल रही थी। सामगान के स्थान पर हुंफट् जैसे तांत्रिक मंत्रों की गूंज थी। उक्त उद्धरण में लेखक (चन्द्रधर शर्मा गुलेरी) मानो ऋषि दयानन्द के विचारों को ही व्यक्त कर रहे हैं। ऋषि दयानन्द ने भी पाणिनीय व्याकरण के स्थान पर कातन्त्र, सारस्वत, चन्द्रिका, मुग्धबोध, कौमुदी, शेखर (शब्देन्दु शेखर, परिभाषेन्दुशेखर) मनोरमादि अनार्ष ग्रन्थों के प्रचलन को चिन्तनीय माना था। नव्य-न्याय को स्वामी जी "काकभाषा" कहते थे तथा आर्ष स्मृति (मनु स्मृति) के स्थान पर धर्मसिन्धु, निर्णय सिंधु, व्रतार्क आदि नवीन निबंधों के विरुद्ध थे। स्वामी विवेकानन्द ने बंगाल में तांत्रिक शाक्त मत (वाममार्ग) के प्रचलन पर चिन्ता व्यक्त की थी। चैतन्य

द्वारा प्रचारित वैशाख मत ने वैदिक सिद्धान्तों के स्थान पर नामस्मरण तथा संकीर्तन के आडम्बरों से भरी पौराणिक भक्ति को प्रमाण माना था। ऐसे वातावरण में वेद चर्चा का पं. सामश्रमी द्वारा प्रारम्भ किया जाना सचमुच आश्चर्यजनक था।

स्वामी दयानन्द के काशी आगमन तथा सत्यव्रत सामश्रमी के काशीवास के साथ तक इस नगर में संस्कृत भाषा एवं शास्त्रों के अध्ययन-अध्यापन की स्थिति को जानना आवश्यक है। संस्कृत के अध्ययन अध्यापन को गति देने के लिए काशी में क्वीन्स कालेज की स्थापना हुई थी। कालान्तर में इसे गर्वमेंट संस्कृत कालेज का नाम मिला और वर्तमान में इसे सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के नाम से जाना जाता है। तत्कालीन विद्वानों में गौड़ स्वामी के मठ के स्वामी विश्वरुप तथा स्वामी विशुद्धानन्द, शिवकृपा वेदान्त सरस्वती, पं. बस्तीराम. पं. बाल शास्त्री, पं. काशीनाथ शास्त्री, पं. राजाराम शास्त्र आदि के नाम पं. सामश्रमी की जीवनी में स्मृत किये गये हैं। ये तथा कतिपय अन्य विद्वान् शास्त्रार्थ स्थल पर उपस्थित थे। संस्कृत कालेज के प्रथम प्रिंसिपल डॉ. वैलेन्टाइन तथा बाद में राल्फ टी. एच. ग्रिफिथ नियुक्त हुए। ज्ञातव्य है कि जब ऋषि दयानन्द ने वेद भाष्य लेखन प्रारम्भ किया तो पंजाब सरकार ने इसके प्रारंभिक अंश को जिन विद्वानों के पास सम्मति हेतु भेजा उनमें एक नाम राल्फ ग्रिफिथ का भी था। ग्रिफिथ ने चारों वेदों का अंग्रेजी में पद्यानुवाद किया तथा वाल्मीकीय रामायण को भी अंग्रेजी में अनूदित किया था। इन दो अंग्रेज प्रिसिंपलों के अतिरिक्त डॉ. थीबो नामक प्रसिद्ध संस्कृतज्ञ काशी में थे तथा लाजरस नामक एक यूरोपीय (सम्भवतः यहूदी) सज्जन ने काशी में अपना प्रेस कायम किया था।

जहां संस्कृत ग्रन्थों का मुद्रण होता था। स्मर्तव्य है कि स्वामी दयानन्द ने जब अपने वेदभाष्य का प्रकाशन आरम्भ किया तो ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका का प्रारंभिक अंश इसी लाजरस प्रेस में ही छपा था। बाद में इसे मुद्रणार्थ मुम्बई के निर्णय सागर प्रेस और अन्ततः स्वामी जी के स्वस्थापित वैदिक यंत्रालय (प्रथम बनारस तथा बाद में प्रयाग और अजमेर) में छपाया जाने लगा। लाजरस प्रेस का काम मि. लाजरस के अतिरिक्त उनका पुत्र मि. वेनिस संभालता था। संस्कृत ग्रन्थों के मुद्रण कार्य में उस विदेशी का काम स्मरणीय है।

पं. सामश्रमी ने जिस संस्कृत मासिक पत्रिका 'प्रत्नकम्रनन्दिनी' का सम्पादन, प्रकाशन किया, उसका अर्थ क्या है ? पं. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी के अनुसार इसका अर्थ है पुरानी बातों के शौकीनों को आनन्द देने वाली पत्रिका। इस पत्रिका की प्रतियां गवर्नमेंट संस्कृत कालेज वाराणसी के पुस्तकालय में थी। यहां से इस शास्त्रार्थ विवरण को पं. मथुराप्रसाद दीक्षित ने स्वसम्पादित स्वामी दयानन्द जी का सच्चा काशी शास्त्रार्थ नाम से सन् १९१६ में, पुनः सन् १९६९ प्रकाशित किया। मूल में इसका शीर्षक था - **'काशीस्थ राज समायां प्रतिमापूजन विचारः'** प्रतनकम्र नन्दिनी में शास्त्रार्थ का विवरण पं. सामश्रमी ने स्वमत के रूप में दिया था, जो सर्वांश में स्वीकार्य नहीं हो सकता। काशी के पण्डितों ने तो स्वामी दयानन्द को इस शास्त्रार्थ में पराजित माना था तथापि पं. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी के अनुसार स्वामी जी ने भी इन पण्डितों को अप्रतिम करने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। उनके अनुसार :- 'इन्हीं दिनों में स्वामी धयानन्द धूमकेतू की तरह काशी में आ पहुंचे और अक्षोभ्य समुद्र की तरह काशी की सतह उनके आने से पेंड़े तक हिल गई। लोक विस्मय से आंखे फाड़े हुये रह गये कि स्वामी जहां मात्र कण्ठ करने वाले वैदिकों से मिलता है, वहां उन्हें भाष्य व्यापी व्याकरण के ऊपर स्थित अर्थ ज्ञान से गूंगा कर देता है, वहां वह घटोघटः का डष कण्डन छोड़कर उन्हें सीधा वैदिक व्याकरण की चकाब में गोते खिलाता है। जिन्होने नव्य न्याय में पचीसों वर्ष बिताये थे, उन्हें उसने निर्दयता के साथ कलाम संज्ञा में उलझाया और जिन्हें सारा शतपथ (ब्राह्मण) कण्ठस्थ था, उन्हें एक शब्द (धर्म) का अर्थ पूछकर चुप कर दिया।

वर्तमान महाराज काशीराज के पिता महाराज ईश्वरीप्रसाद नारायण सिंह के सभापतित्व में एक बड़ी भारी सभा हुई, जैसी कदाचित काशी में कभी नहीं हुई थी। स्वामी दयानन्द जी का विशेषत्व यह था कि वे वेद का

प्रमाण मानते ते, परन्तु अपने लिए इस अर्थों से वेद से वे बातें कहते थे, जिन्हें वेद विरुद्ध समझते थे। सभा में कुछ नहीं हुआ। आर्य सामाजिक तो कहते हैं कि काशी वाले गुण्डों ने ईंट बरसाई और ताली पीट दी और काशी वासी कहते हैं कि स्वामी के हाथ में एक पत्र दिया गया जिसकी पंक्ति का अर्थ उनसे नहीं हुआ। इस सभा का वृत्त पं. सामश्रमी ने अपनी प्रत्नकम्र नन्दिनी में निष्पक्षपात छापा।

स्वामी दयानन्द जी के प्रति तथा उनके वैदिक विज्ञान के प्रति सत्यव्रत जी ने सम्मान दिखाया है, परन्तु वेद में इतिहास नहीं है, सभी नाम गुणवाचक है इत्यादि उक्तियों का खण्डन किया है। (मयार्दा फरवरी 1912 में प्रकाशित लेख) गुलेरी का खण्डन किया है।

उक्त उद्धरण पर हमारी टिप्पणी निम्न है :-

(१) व्याकरण में कलम संज्ञा कहीं लिखी है या नहीं, यह स्वामी दयानन्द का अमोध तथा अमेध प्रश्न होता था। इसका समाधान प्रतिपक्षियों को सूझता ही नहीं था। इसे उन्होंने अनेक शास्त्रार्थों में आजमाया था।

(२) धर्म की परिभाषा बताने में स्वामी विशुद्धानन्द असमर्थ रहे जबकि अधर्म का लक्षण बताने में बालशास्त्री असफल रहे।

(३) स्वामी दयानन्द जी वेदार्थ प्रणाली कोई उनकी निज की अविष्कृत प्रणाली नही थी। वे प्राचीन ब्रह्मणादि ग्रन्थों तथा निरुक्त आदि की सहायता से वेदार्थ करते थे।

(४) निश्चय ही इस शास्त्रार्थ की भ्रूणहत्या स्वयं काशी के उन पंडितो ने की जिन्होंने एकाकी संन्यासी दयानन्द पर ईंट पत्थर बरसाये और ऐसा अनर्थ करने में गुण्डों को प्रोत्साहन दिया। बड़ी कठिनाई से उनकी प्राणरक्षा हो सकी।

(५) जहां तक ताली पीटने का सवाल है खुद स्वामी विशुद्धानन्द ने 'हर हर बिश्वेश्वर' का नारा दिया और ताली पीट कर सभा के अनुशासन को तार तार किया।

(६) जो पत्र (पन्ना) स्वामी जी को दिया गया उसे सायंकालीन अंधेरा हो जाने तथा दीपक की व्यवस्था न होने के कारण स्वामी जी ठीक तरह से पढ़ नहीं सके। इतने में ईंट पत्थर बरसने लगे। तथापि 'दशगेऽहनि निञ्चित पुराण.....' का सत्यार्थ स्वामी जी ने वहीं स्पष्ट कर दिया था। उनके अनुसार पुराण शब्द प्रचलित अठारह पुराणों का वाचक नहीं है।

(७) प्रत्न कम्र नन्दिनी में छपा शास्त्रार्थ वृत्तान्त सर्वथा निष्पक्ष नहीं है। इन पंक्तियों के लेखक (डा. भारतीय) ने स्वसंपादित दयानन्द शास्त्रार्थ संग्रह (रामलाल कपूर ट्रस्ट से १९८२ मे प्रकाशित काशी शास्त्रार्थ प्रकरण में प्रत्नकम्र नन्दिनी में प्रकाशित विवरण पर यथा स्थान अपनी आपत्तियाँ दिखाई है।

(८) वेद में इतिहास नहीं है, यह स्वामी दयानन्द का निज का अविष्कृत मत नहीं है। यास्काचार्य के निरुक्त ने वैदिक पदों के व्युत्पत्ति लाभ अर्थ कर इतिहासवाद से अपनी मत भिन्नता दिखाई है। स्वामी दयानन्द भी इस विचार में यास्क के अनुयायी हैं। वेदों में लौकिक इतिहास का अस्तित्व सदा से अविशंक्ति रहा है।

सामश्रमी का वैदिक कृतित्व :- कालान्तर में पं. सामश्रमी भारत की राजधानी कलकत्ता आ गये। यहां संस्कृत प्रेमी, सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश सर विलियम जोन्स ने प्राच्य विधाओं के साहित्य के अन्वेषण तथा अभिवृद्धि के लिए रॉयल एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना की थी। डॉ. राजेन्द्रलाल मित्र ने सामश्रमी को इस सोसायटी में नियुक्त करवाया। यूरोपीय विद्वानों ने वैदिक संहिताओं के सम्पादन में पर्याप्त श्रम किया था। मैक्समूलर द्वारा सम्पादित ऋग्वेद संहिता (सायण भाष्य सहित), वेबर द्वारा सम्पादित यजुर्वेद, ह्विटनी द्वारा सम्पादित अथर्ववेद अपने अपने क्षेत्र के मानक ग्रन्थ माने जाते थे। अब सामश्रमी ने सामवेद का सम्पादन किया। गुरुमुख से उन्होंने सामगान के जो प्रकार सीखे थे, उनका भूरिशः उपयोग उन्होने इस कार्य में किया। तदनन्तर उन्होंने 'निरुक्तालोचन' लिखा। इसमें दो टीकाओं सहित यास्कीय निरुक्त का उत्तम संस्करण प्रस्तुत किया गया है। 'ऐतरेयालोचन' में उन्होंने ऐतरेय ब्राह्मण का विस्तृत समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया।

वेदाध्ययन में प्रवेश हेतु उन्होंने 'त्रयी चतुष्टय' ग्रन्थ लिखा। इसमें वेदों का सामान्य परिचय, कुछ चुने हुए सूक्तों की व्याख्या तथा इसका बंगला अनुवाद दिया गया है। सामवेद का बंगला अनुवाद उनका कालाजयी प्रयास

थ। सामवेद के अध्ययन को गति देने के लिए उन्होंने कलकत्ता में साम विद्यालय स्थापित किया तथा संस्कृत पत्रिका 'ऊषा' का प्रवर्तन किया। यह पता नहीं चलता कि स्वामी दयानन्द जब १८७२-७३ में लगभग चारमास कलकत्ता में रहे थे, उनका सामश्रमी से सम्पर्क हुआ था या नहीं। इतना तो पता चलता है कि कुछ शास्त्र ग्रन्थ क्रयकरने के लिये स्वामी जी ऐशियाटिक सोसाइटी के कार्यालय में गये था तथा वहां कार्यरत पंडितों से सम्पर्क किया था।

पं. सत्यव्रत सामश्रमी पाणिनीय व्याकरण तथा वेद विद्या को पुनः प्रचारित करने का लक्ष्य लेकर स्वक्षेत्र बंगाल में आये थे। किन्तु वे अपने इस लक्ष्य में कृतकार्य नहीं हो सके। इसका कारण बताते हुए पं. गुलेरी का मानना है कि सामश्रमी के यथासंख्य प्रयत्न करने पर भी बंगाल में कातंत्र आदि अनार्ष व्याकरणों का प्रभाव कम नहीं हुआ और नव्य न्याय तथा नवीन स्मार्ट ग्रन्थों (निबंध ग्रन्थ) के प्रचार के कारण, तथैव चैतन्य प्रचारित और वैष्णव सम्प्रदाय के समस्याओं के कारण बंगीय समाज में सामवेद तथा अन्य वेदों का प्रचार सम्भव नहीं हो सका। सामश्रमी के उल्लेखनीय शिष्यों में गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के वर्षों तक आचार्य एवं कुलपति रहे पं. नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ तथा रामानन्दी सम्प्रदाय के संन्यासी स्वामी भगवदाचार्य के नाम उल्लेखनीय है। इन स्वामी जी ने वेदों का भाष्य दयानन्दनीय पद्धति से किया है।

पता : ३/५, शंकर कालोनी, श्रीगंगा नगर

गृहस्थ के लिए सुख-शांति के उपाय

१. नित्य प्रति प्रातः सायं ईश्वर की उपासना-ध्यान-जप-चिन्तन करना।
२. नित्य प्रति यज्ञ (हवन) का अनुष्ठान करना।
३. पति-पत्नी, सास-ससुर माता-पिता आदि की सेवा करना तथा इनका सम्मान करना।
४. घर में सात्विक अन्न पकाना पुनः उसमें थोड़ा घी मिलाकर अग्नि में दस आहुति प्रदान करना।
५. गाय-बैल, कुत्ता-बिल्ली, पक्षी आदि जीवों तथा गरीब, अनाथ, दीन हीन लोगों को अन्न आदि प्रदान करना।
६. घर में पधारे हुए विद्वान, अतिथि आदि की यथाशक्ति सेवा-सत्कार करना।
७. प्रतिदिन किन्हीं धार्मिक संस्थानों, आश्रमों, गुरुकुलों, गोशालाओं आदि के लिए अपनी पवित्र कमाई का कुछ अंश, दान हेतु बचत करना एवं प्रतिमाह भेजना।
८. अपने परिवारजनों, संबंधियों, पड़ौसियो से प्रेमपूर्वक व्यवहार करना तथा स्वयं प्रसन्नतापूर्वक रहना।
९. अपनी सन्तान को धार्मिक, परोपकारी, ईश्वरभक्त बनाने हेतु उचित शिक्षा देना व दिलाना।
१०. नित्य प्रति धार्मिक-आध्यात्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय करना।
११. एक पत्निव्रत/पतिव्रता धर्म का तन-मन-वचन से पालन करना व सहनशीलता को धारण करना।
१२. अपने बच्चों व परिवार के अन्य बच्चों के साथ समानता का व्यवहार करना।
१३. सदा सत्य, मधुर एवं हितकारी बोलना।
१४. स्वयं धार्मिक-आध्यात्मिक ग्रन्थों एवं अच्छे-अच्छे साहित्यों को पढ़ सके, समझ सके इतनी विद्या प्राप्त करना।
१५. अपनी व्यक्तिगत, पारिवारिक उन्नति करने के साथ-साथ सामाजिक-राष्ट्रीय उन्नति हेतु भी प्रयत्नशील रहना।

- ब्र. प्रशान्त आर्य (दर्शनाचार्य) दर्शनयोग महाविद्यालय, आर्यवन, रोजड़ (गुजरात)

वैचारिक

आर्यसमाज और विश्व शांति

- डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने मनुष्य मात्र के हित कल्याण, सुख, समृद्धि और उन्नति के उद्देश्य के लिए आर्यसमाज की स्थापना की। आर्यसमाज के छठे नियम में भी बताया है कि संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक व सामाजिक उन्नति करना। ऋषि की इस भावना में संसार की उन्नति व समृद्धि की भावना है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की यह बात संसार भर के मनुष्यों के लिए थी, किसी एक जाति वर्ग व सम्प्रदाय के लिए नहीं थी।

मुन्शी समर्थ दान ने भी कहा कि "मत-मतान्तरों के विषय में जो लिखा गया है वह प्रीतिपूर्वक सत्य के प्रकाश होने और संसार के सुधरने के अभिप्राय से लिखा गया है, किन्तु निन्दा की दृष्टि से नहीं"- ऐसा उन्होंने (मुन्शी समर्थदान) सत्यार्थ प्रकाश के विषय में लिखा है।

संसार के लोगों की भलाई व श्रेष्ठता के लिए ही आर्य शब्द की व्याख्या करते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्य का अर्थ "धर्मयुक्त गुण, कर्म, स्वभाव वाले, उत्तम गुण, कर्म, स्वभावयुक्त रहना बताया है। जैन, बौद्ध, इस्लाम क्रिश्चियनों की भांति आर्य किसी जाति, वर्ग, सम्प्रदाय के अनुयायी नहीं है।"

इसी प्रकार वैदिक धर्म मनुष्य मात्र के लिए है इसके अनुसार :-

(१) वैदिक धर्म का पूरा नाम सत्य, सनातन वैदिक है, जो अत्यन्त प्राचीन है, इसमें चार वर्ण व चार आश्रम है, चारों वर्ण, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र जन्मना नहीं, अपितु गुण, कर्म, स्वभाव से होते हैं तथा चार आश्रम है मनुष्य का जीवन इन चार आश्रमों में व्यवस्थानुसार बांटा गया है, सोलह संस्कार समय-समय पर करने होते हैं।

(२) महर्षि दयानन्द सरस्वती के वेदानुसार ईश्वर को विश्व की सर्वोच्च शक्ति बताया है, जिसका मुख्य नाम "ओ३म्" है, वेद में वर्णित इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, वायु आदि उस एक ईश्वर के ही नाम है, वही सृष्टि पालना कर्ता है सर्वशक्ति मान है, निराकार है, अनादि अनन्त व अजन्मा है।

(३) छह दर्शन सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा व वेदान्त को माना है, जो वेदों को स्वतः प्रमाण मानते हैं, ऋषि दयानन्द ने प्रकाश किया है कि "चारों वेदों को निभ्रान्त स्वतः प्रमाण मानता हूँ वे स्वयं प्रमाण स्वरुप है, जिनके प्रमाण होने में किसी अन्य ग्रन्थ की अपेक्षा नहीं, जैसे सूर्य व प्रदीप अपने स्वरुप के स्वतः प्रकाशक और पृथिव्यादि के भी प्रकाशक होते हैं, वैसे चारों वेद है।"

(४) ऋषि ने ईश्वर के समान ही जीव को भी अनादि तथा नित्य माना है "जीव और ईश्वर स्वरुप और वैधर्म्य से भिन्न और व्याप्य व्यापक और साधर्म्य से अभिन्न है।"

(५) ऋषि के अनुसार पुनर्जन्म होता है तथा मनुष्य को अच्छे बुरे कर्मों का फल भोगना पड़ता है।

(६) ऋषि के अनुसार स्त्रियों की स्थिति पुरुषों के समान होनी चाहिए। प्राचीन काल में स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार थे। गार्गी, मैत्रेयी, मदालसा, कैकेयी विद्वान स्त्रियाँ थी।

(७) ऋषि दयानन्द ने बताया कि मूर्ति पूजा वेद विरुद्ध है, वेद में दिया है कि "**न तस्य प्रतिमा अस्ति**" - यजु. ३२/३। जब ईश्वर जन्म ही नहीं लेता तो उसकी मूर्ति का से आई।

ऋषि दयानन्द ने प्रत्येक मत से विरोधी बातों को दूरकर अंध विश्वास, पाखण्ड व अस्पृष्य को निकाल तमाम विचारों वाली बातों को मानने पर बल दिया, जिससे विश्व में मतैक्य हो सके। आपसी विपरीत व विरोधी बातें दूर हो, ईर्ष्या वैमनस्य दूर कर सुख व शान्ति स्थापित हो सके।

पता : चन्द्रलोक कालोनी, खुर्जा।

विवेचनात्मक

जीव अमर हैं तो हत्या या आत्महत्या, पाप अपराध क्यों हैं ?

- इन्द्रजीत 'देव'

> **शरीर आत्मा का घर है। यदि आप किसी का घर तोड़ दें तो यह पाप ही माना जाएगा। गीता में शरीर को आत्मा का वस्त्र कहा गया है। किसी के वस्त्र फाड़ने वाले को अपराधी माना ही जाएगा।**

जीवन क्या है ? शरीर व आत्मा का एक होना व रहना। मृत्यु क्या है ? शरीर व आत्मा का पृथक हो जाना। यह मृत्यु तीन प्रकारों में से किसी एक प्रकार से हो सकती है। ये तीन प्रकार है -

१. हत्या - जब कोई दूसरा व्यक्ति किसी साधन से एक प्राणी को मारता है तो यह हत्या कहलाती है।

२. आत्महत्या - जब कोई व्यक्ति दुःख निराशा या असफलता की अवस्था में किसी साधन द्वारा अपनी हत्या कर लेता है तो यह आत्महत्या कहलाती है।

३. मृत्यु - बीमारी, जरावस्था के कारण जब एक प्राणी का आत्मा शरीर-त्याग करता है तो इसे मृत्यु कहते हैं।

किसी भी प्रकार से हो, आत्मा व शरीर का पृथक-पृथक होना अनिवार्य है। उपरोक्त तीसरे प्रकार की मृत्यु होने पर कोई अपराध नहीं माना जाता। किसी प्रकार का पाप भी स्वीकार नहीं किया जाता। यह स्वाभाविक मृत्यु मानी जाती है परन्तु उपरोक्त प्रथम व द्वितीय प्रकारों की मृत्यु करने पर स्थिति भिन्न होती है। हत्या करने वाले के विरुद्ध केस दायर किया जाता है। यदि वह तुरन्त पकड़ा जाए तो ठीक है अन्यथा उसको पकड़ने के सभी सम्भव उपाय किए जाते हैं। उसे अपराधी सिद्ध करके उचित दण्ड दिलाने के सभी प्रयत्न भी किए जाते हैं। आत्महत्या करने वाले व्यक्ति को यदि अपने उद्देश्य में सफलता मिल जाती है अर्थात् वह शरीर व आत्मा को पृथक-पृथक करने में सफल हो जाता है तो फिर उसके विरुद्ध केस बनता है तो परन्तु केस किसके विरुद्ध दायर करें? अब तो वह प्राणी चला गया है। जिसने यह कृत्य किया था। अतः उसके विरुद्ध कुछ नहीं हो सकता परन्तु उसे पापी व अपराधी तो माना ही जाता है। अपराध व पाप में क्या भेद है ? एक ही कार्य के दो नाम क्यों है ? उत्तर में निवेदन यह है कि राजनैतिक संविधान की दृष्टि से जो कार्य गलत है, वह अपराध कहलाता है जबकि ईश्वरीय आज्ञानुसार जो कार्य गलत है, उसे पाप कहा जाता है। हत्या और आत्महत्या ये दोनों ही ईश्वरीय व राजनैतिक दृष्टिकोणों से गलत कार्य है, अतः इनके लिए हमने अपराध और पाप, इन दोनों शब्दों का प्रयोग किया है। इस विषय में और अधिक विचार करने से पूर्व आत्मा पर तनिक विचार करना अनिवार्य प्रतीत होता है, क्योंकि किसी भी प्रकार से मृत्यु हो, आत्मा शरीर से पृथक होगा ही। आत्मा के विषय में यजुर्वेद (१०।४८।५) में कहा गया है - **अहमिन्द्रो न पराजिग्य इद्धनं न मृत्यवेऽवतस्थे कदाचन**। अर्थात् मैं आत्मा हूँ, मैं ऐश्वर्यवान् हूँ। मैं कभी भी मृत्यु को प्राप्त नहीं होता। मेरे धन को कोई भी छीन नहीं सकता, चुरा नहीं सकता।

आत्मा का यह धन क्या है ? कर्मेन्द्रियां, ज्ञानेन्द्रियां, मन, बुद्धि शरीर के विभिन्न अवयव-ये आत्मा के धन हैं। इन पर जीवात्मा का अधिकार है। यह धन आत्मा को बार-बार मिलेगा। इस धन पर जीव का आरक्षण (कर्मफल के अनुसार) रहता है। जीवात्मा मृत्यु को चुनौती देता है। "ओ मृत्यु ! तू क्या कर सकती ? मुझे तो मार नहीं सकती। हाँ, इस एक जन्म के शरीर को मुझ से छीन सकती है, परन्तु ऐसे शरीर मुझे बार-बार मिले हैं, पूर्वजन्मों में तथा आगे भी बार-बार मिलेंगे। जब शरीर मिलेंगे तो इनके अवयव भी मिलेंगे। अतः मेरे धन को तू नहीं छीन सकती। इस धन पर मेरा अधिकार है। हाँ, अधिकतम तू मुझ से यह मेरा एक वर्तमान शरीर ही छीन सकती है परन्तु ऐसे असंख्य शरीरों का मैने पूर्वजन्मों में भोग किया है तथा असंख्य शरीरों का भोग मैं आगामी जन्मों में करूंगा।" यजुर्वेद के ४०वें अध्याय में आत्मा व शरीर के विषय में कहा गया है - **वायुरनिलं अमृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम्**। अर्थात् यह आत्मा अमर है -'अमृत'। अर्थात् अ+ मृत, जो मरता नहीं है जबकि इस

शरीर का परिणाम व अंजाम भस्म होता ही है। इसी आधार पर बाद में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा था -

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥

(गीता २।२३)

अर्थात् यह आत्मा शस्त्रों से काटा नहीं जाता, अग्नि से जलाया नहीं जा सकता, पानी इसे गला नहीं सकता, हवा से यह सुखाया नहीं जा सकता, इसकी हत्या नहीं की जा सकती। यह आत्मा असहनीय है, अवध्य है।

जब आत्मा असहनीय, अवध्य, अमृत व शाश्वत है तो स्पष्ट है कि आत्मा की हत्या हो ही नहीं सकती फिर जीवित व्यक्ति को मार देने वाले हत्यारे को घृणा की दृष्टि से क्यों देखा जाता है ? उसे क्यों अपराधी य पापी माना जाता है ? क्यों उसे दण्ड दिया जाता है ? आत्महत्या करने में सफल रहने वाले व्यक्ति के विरुद्ध कुछ भी कार्यवाही करना सम्भव नहीं होता उसे दण्ड भी नहीं दिया जा सकता, परन्तु उसका कार्य अपराध व पाप कर्म तो माना ही जाएगा।

इस सम्बन्ध में यदि हमें शरीर व आत्मा का परस्पर सम्बन्ध समझ में आ जाए तो यह भी समझ में आ जाएगा कि हत्या और आत्महत्या अपराध व पाप क्यों है। शरीर व आत्मा का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। आत्मा शरीर के बिना निष्क्रिय है व शरीर, आत्मा के बिना व्यर्थ है। सभी कार्य करने का साधन यह शरीर ही है जो जीवात्मा को पिछले जन्मों के कर्मानुसार मिलता है, ईश्वरीय व्यवस्था से। यह इसलिए मिलता है ताकि जीवात्मा पिछले कर्मों का फल भोग सके। मनुष्येत्तर शरीर तो केवल इसी एक उद्देश्य से मिलता है। इसी आधार पर मनुष्येत्तर योनियों को भोग-योनियाँ व मनुष्य शरीर को भोग व कर्म योनियां माना गया है। वैशेषिक दर्शनकार महर्षि कणाद ने इसे "**भोगापवर्गार्थम् दृश्यम्**।" कहा है। अर्थात् पिछले कर्मों का फल भोगने व मुक्ति-प्राप्ति के लिए यह संसार बना है। यह प्राप्ति हमें शरीर द्वारा उत्तम कर्म करने के फलस्वरुप ही होगी। शरीर के अवयवों के बिना जीवात्मा को तो अपने अस्तित्व का भी भान नहीं होता, नहीं हो सकता। आत्मा के समस्त कार्यों का आधार, आश्रय व साधन शरीर ही है। कहा भी है - **शरीरमाद्यं खलु धर्म-साधनम्**। शरीर से सम्बद्ध होने पर ही आत्मा को ज्ञान, प्रयत्न, इच्छा, द्वेष व सुख-दुःख का आभास होता है जो आत्मा के छः लक्षणों से अभिहित किए गए हैं। न्यायदर्शन में महर्षि गौतम ने (=३।१।५ व ६) में कहा है - **तदभावः सात्मकप्रदाहेऽपि तन्नित्यत्वात्**। अर्थात् नित्य आत्मा का वध नाश नहीं होता अपितु इसके कार्य साधनों का नाश होने से हिंसा होती है, अतः पाप है। **न कार्याश्रयर्त्तुवधात्**। अर्थात् आत्मा के भोगादि के साथ देहादि संघात का वध हिंसा रुप पातक है। आत्मा का उच्छेद हिंसा नहीं क्योंकि वह नित्य है, शाश्वत है, अमर है, उसका उच्छेद असम्भव है। आत्मा के फल भोगने में अवरोध पैदा करना अर्थात् शरीर का उच्छेद पाप है। ईश्वर की न्याय-व्यवस्था में बाधा उपस्थित करना पातक है। शरीर आत्मा का घर है। यदि आप किसी का घर तोड़ दें तो यह पाप ही माना जाएगा। गीता में शरीर को आत्मा का वस्त्र कहा गया है। किसी के वस्त्र फाड़ने वाले को अपराधी माना ही जाएगा।

जब जीव की इस लेख के आरम्भ में कही स्वाभाविक मृत्यु होती है, तब भी शरीर के अवयव अर्थात् आत्मा के साधन निष्क्रिय होते हैं। तब भी तो उस शरीर को चिता में जलाते हैं। क्या तब पाप नहीं लगता ? यह एक प्रतिप्रश्न है। इसका स्पष्ट व सरल उत्तर यह है कि जिस जीव के लिए शरीर बना था, वह इसे छोड़ कर चला गया है। उसने अब लौटकर वापस पुनः इस शरीर में आना नहीं है। इस शरीर व इसके साधनों का प्रयोग अब उसने करना नहीं है। अपितु यह धर्म व कर्त्तव्य है क्योंकि "**भस्मान्तं शरीरम्**" ही शरीर की परिणति है। न्यायदर्शन के "**शरीरदाहे पातकाभावात्**।" सूत्र में इसकी पुष्टि उपलब्ध है।

राजनैतिक संविधान की दृष्टि से हत्या या आत्महत्या इसलिए अपराध है क्योंकि व्यक्ति को खिलाने, पढ़ाने, सिखाने व राष्ट्र के अन्य साधन राष्ट्र द्वारा ही उपलब्ध कराए जाते हैं जिनका आधार लेकर ही एक व्यक्ति शक्ति व विद्या प्राप्त करता है। उसके शरीर व बुद्धि आदि पर राष्ट्र का अधिकार है। राष्ट्र की जायदाद और सम्पत्ति का नाश करने का अधिकार किसी नागरिक को नहीं है। अतः किसी की हत्या या आत्महत्या करना राजनैतिक संविधानानुसार अपराध है।

पता : पुरानी सब्जी मण्डी मार्ग, यमुनानगर (हरयाणा)

१७ नवम्बर
पुण्यतिथि

पंजाब केसरी लाला लाजपतराय

- लोचन कुमार आर्य

लाला लाजपतराय जी बहुमुख प्रतिभा के धनी थे। यह एक लेखक, राजनीतिज्ञ, उत्कृष्ठ समाजसेवी, पंजाब नेशनल बैंक व लक्ष्मी इंश्यारेंस कंपनी के संस्थापक भी थे, किन्तु उनकी सर्वाधिक प्रसिद्धि एक महान स्वतन्त्रता सेनानी के रुप में ही है।

प्रारंभिक जीवन व समाज सेवा :- लालाजी का जन्म २८ जनवरी १८६५ को पंजाब राज्य के मौंगा जिले के दूधिके गाँव में हुआ था। उनके पिता श्री लाला राधाकिशन आजाद जी सरकारी स्कूल में उर्दू के शिक्षक थे जबकि उनकी माता देवी गुलाबदेवी धार्मिक महिला थी। लाला जी बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि थे व धन, आदि की अनेक कठिनाईयों के पश्चात् भी उन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त की। १८८० में कलकत्ता यूनिवर्सिटी व पंजाब यूनिवर्सिटी की प्रवेश परीक्षाएँ पास करने के बाद उन्होंने लाहौर गवर्नमेंट कालेज में दाखिला ले लिया व कानून की पढ़ाई प्रारंभ की। लेकिन घर की माली हालत ठीक न होने के कारण दो वर्ष तक उनकी पढ़ाई बाधित रही। लाहोर में बिताया गया समय लाला जी के जीवन में अत्यधिक महत्वपूर्ण साबित हुआ और यहीं उनके भावी जीवन की रुपरेखा निर्मित हो गयी। उन्होने भारत के गौरवमय इतिहास का अध्ययन किया और महान भारतीयों के विषय में पढ़कर उनका हृदय द्रवित हो उठा। यहीं से उनके मन में राष्ट्र प्रेम व राष्ट्र सेवा की भावना का बीजारोपण हो गया। कानून की पढ़ाई के दौरान लाला हंसराज व पं. गुरुदत्त जी जैसे क्रांतिकारी के संपर्क में आये। यह तीनों अच्छे मित्र बन गये और १८८२ में आर्यसमाज के सदस्य बन गए। उस समय आर्यसमाज समाज सुधार की दिशा में महत्वपूर्म भूमिका निभा रहा था और पंजाब के युवाओं में अत्यधिक लोकप्रिय था।

१८८५ में उन्होने लाहोर के गवर्नमेंट कालेज से द्वितीय श्रेणी में वकालत की परीक्षा पास की और हिसार में अपनी कानूनी प्रेक्टिस प्रारंभ कर दी। प्रेक्टिस के साथ-साथ वह आर्यसमाज के सक्रिय कार्यकर्ता भी बने रहे। स्वामी दयानन्द जी की मृत्यु के पश्चात् उन्होंने अंग्लो वैदिक कालेज हेतु धन एकत्रित करने में सहयोग किया। ***आर्यसमाज के तीन लक्ष्य थे : समाज सुधार, हिन्दू धर्म की उन्नति और शिक्षा का प्रसार।*** वह अधिकांश समय आर्यसमाज के सामाजिक कार्यों में ही लगे रहते। वह सभी सम्प्रदायों की भलाई के प्रयास करते थे और इसी का नतीजा था कि वह हिसार म्युनिसिपल्टी हेतु निर्विरोध चुने गए जहां की अधिकांश जनसंख्या मुस्लिम थी।

समाजसेवा और राजनीतिक जीवन :- लाला जी के मन में अब स्वतन्त्रता की उत्कट भावना पैदा हो चुकी थी और इसीलिए १८८८ में २३ वर्ष की आयु में उन्होंने समाज सेवा के साथ - साथ राजनीति में भी प्रवेश किया और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य बन गए। जब पंजाबी प्रतिनिधिमंडल के साथ उन्होंने इलाहाबाद में कांग्रेस अधिवेशन में भाग लिया तो उनका जोरदार स्वागत हुआ और उनके उर्दू भाषण ने सभी का मन मोह लिया। अपनी योग्यता के बल पर वह जल्द ही कांग्रेस के लोकप्रिय नेता बन गए। लगभग इसी समय जब सर सैय्यद अहमद खान ने कांग्रेस से अलग होकर मुस्लिम समुदाय से यह कहना शुरु किया कि उसे कांग्रेस में जाने की बजाय अंग्रेज सरकार का समर्थन करना चाहिए तब लाला जी ने इसके विरोध में उन्हें कोहिनूर नामक उर्दू साप्ताहिक में खुले पत्र लिखे जिन्हें काफी प्रशंसा मिली।

१८९२ में पंजाब हाईकोर्ट में वकालत करने हेतु वह हिसार से लाहोर चले गए। यहां भी लालाजी राष्ट्र सेवा में जुटे रहे। उन्होंने लेखन द्वारा भी अपना प्रेरक कार्य जारी रखा और शिवाजी, स्वामी दयानन्द, मेजिनी, गैरीबाल्डी जैसे प्रसिद्ध लोगों की आत्मकथाएँ अनुवादित

व प्रकाशित की। इन्हें पढ़कर अन्य लोगों ने भी स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु संघर्ष की प्रेरणा प्राप्त की।

लालाजी जन सेवा के कार्यों में तो सदैव ही आगे रहते थे इसीलिए १८९६ में जब सेन्ट्रल प्रोविंस में भयानक सुखा पड़ा तब लाला जी ने वहां अविस्मरणीय सेवाकार्य किया। जब वहां सैकड़ों निर्धन, अनाथ, असहाय मात्र ईसाई मिशनरियों की दया पर निर्भर थे और वह उन्हें सहायता के बदले अपने धर्म में परिवर्तित कर रही थीं तब लालाजी ने अनाथों के लिए एक आन्दोलन चलाया व जबलपुर, बिलासपुर आदि अनेक जिलों के २५० अनाथ बालकों को बचाया और उन्हें पंजाब में आर्यसमाज के अनाथालय में ले गये। उन्होंने कभी भी धन को सेवा से ज्यादा महत्व नहीं दिया और जब उन्हें प्रतीत हुआ की वकालत के साथ-साथ समाज सेवा के लिए अधिक समय नहीं मिल पा रहा है तो उन्होंने अपनी वकालत की प्रेक्टिस कम कर दी।

इसी प्रकार १८९९ में जब पंजाब, राजस्थान, सेन्ट्रल प्रोविंस आदि में और भी भयावहग अकाल पड़ा और १९०५ में कांगड़ा जिले में भूकंप के कारण जन-धन की भारी हानि हुई तब भी लालाजी ने आर्यसमाज के कार्यकर्ता के रुप में असहायों की तन-मन-धन से सेवा सहायता की। उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। भारतीय राष्ट्रिय कांग्रेस में उन्होंने रचनात्मक, राष्ट्रनिर्माण व आत्मनिर्भरता पर जोर दिया। कांग्रेस में वह बाल गंगाधर तिलक जी व बिपिनचन्द्र पाल जी के साथ उग्रवादी विचारधारा से सहमत थे और यह तीनों लाल-बाल-पाल नाम से प्रसिद्ध थे। जहां उदारवादी कांग्रेसी अंग्रेज सरकार की कृपा चाहते थे वहीं उग्रवादी कांग्रेसी अपना हक चाहते थे लाला जी मानते थे कि स्वतंत्रता भीख और प्रार्थना से नहीं बल्कि संघर्ष और बलिदान से ही मिलेगी।

बंगाल विभाजन के समय उन्होंने भी स्वदेशी, स्वराज और विरोध के राष्ट्रिय आन्दोलन में बढ़-चढ़ के भाग लिया। १९०६ में जब कांगेस के उदारवादी और उग्रवादी धड़ों में विवाद हुआ तब उन्होंने मध्यस्थता करने का बहुत प्रयास किया। १९०७ में जब तिलक जी ने कांग्रेस के अध्यक्ष पद हेतु उनका प्रस्तावित किया लेकिन विवाद की संभावना देखते हुए लाला जी ने अपना नाम आगे नहीं बढ़ने दिया। लाला जी मानते थे कि राष्ट्रीय हित के लिए विदेशों में भी भारत के समर्थन में प्रचार करने हेतु एक संगठन की जरुरत है ताकि पूरी दुनिया के सामने भारत का पक्ष रखा जा सके और अंग्रेज सरकार का अन्याय उजागर किया जा सके। इसीलिए १९१४ में वह ब्रिटेन चले गए। यहां से वह अमेरिका गए जहां उन्होंने **इंडियन होम लीग सोसायटी ऑफ अमेरिका** की स्थापना और यंग इंडिया नामक पुस्तक लिखी। इसमें अंग्रेज सरकार का कच्चा चिट्ठा खोला गया इसीलिए ब्रिटिश सरकार ने इसे प्रकाशित होने से पूर्व ही इंग्लैण्ड और भारत में प्रतिबंधित कर दिया। प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति के पश्चात् वह भारत वापस आ गए। उन्होने पंजाब में जालियांवाला नरसंहार के विरोध में असहयोग आन्दोलन का नेतृत्व किया। १९२५ में वह केन्द्रीय विधानसभा के सदस्य भी चुने गए।

मृत्यु :- १९२८ में सात सदस्यीय सायमन कमीशन भारत आया जिसके अध्यक्ष सायमन थे। इस कमीशन को अंग्रेज सरकार ने भारत में संवैधानिक सुधारों हेतु सुझाव देने के लिए नियुक्त किया था जबकि इसमें एक भी भारतीय नहीं था। इस अन्याय पर भारत में तीव्र प्रतिक्रिया हुई और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने पूरे देश में सायमन कमीशन के शांतिपूर्ण विरोध का निश्चय किया। इसीलिए ३० अक्टूबर १९२८ को सायमन कमीशन लाहोर पहुंचा तब वहां उसके विरोध में लाला जी ने मदन मोहन मालवीय जी के साथ शांतिपूर्ण जुलूस निकाला। इसमें भगतसिंह जैसे युवा स्वतन्त्रता सेनानी भी शामिल थे। पुलिस ने इस अहिंसक जुलूस पर लाठी चार्ज किया, इसी लाठीचार्ज में लाला जी को निशाना बनाकर उन पर जानलेवा हमला किया गया जिससे उन्हें घातक आघात लगा अंततः १७ नवम्बर १९२८ को यह सिंह चिर-निद्रा में सो गया। अपनी मृत्यु से पूर्व लाला जी ने भविष्यवाणी की थी कि ***मेरे शरीर पर पड़ी एक-एक लाठी अंग्रेज सरकार के ताबूत में अंतिम कील साबित होगी।*** जो की सच साबित हुई।

पता : भानुप्रतापुर (छ.ग.)

विश्लेषणात्मक

“आओ! आर्यसमाज के सत्संग में चलें, जहां जाने से अनेक लाभ होते हैं”

- मनमोहन कुमार आर्य

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। यह अकेला नहीं रह सकता। घर पर माता-पिता, भाई-बहिन, पत्नी, सन्तानें आदि पारिवारिक सदस्य होते हैं। घर से बाहर विद्यालय तथा व्यवसाय स्थल आदि में भी मनुष्य अपने मित्रों व अन्य अनेक लोगों से संगति करता है। इनके साथ मिलने से इसे कुछ लाभ व हानि दोनों के होने की सम्भावना रहती है। यदि सभी लोग ज्ञानी व चरित्रवान होते हैं तो इस मनुष्य का व्यक्तित्व भी ऐसे ही गुणों से युक्त होता है और यदि किसी में विपरीत व अशुभ गुण होते हैं तो उसका दुष्प्रभाव भी मनुष्य के व्यक्तित्व व जीवन पर पड़ता है। मनुष्य का निर्माण व उन्नति ज्ञानी व गुणी व्यक्तियों के मध्य में रहने से ही होती है। यह प्रायः सब जानते हैं परन्तु फिर भी अच्छे लोगों को ढूंढने व उनसे मित्रता व संगति करने का प्रयत्न सब नहीं करते। अच्छे लोगों की संगति से मनुष्य का व्यक्तित्व बनता है और इसके विपरीत लोगों की संगति से मनुष्य का जीवन अवनति को प्राप्त होता है। अच्छे लोगों की संगति सहित अच्छे ग्रन्थों का स्वाध्याय भी मनुष्य जीवन की उन्नति में बहुत अधिक सत्पुरुषों, गुरुजनों, व अच्छे मित्रों आदि इन सभी का ही प्रभाव होता है। अतः मनुष्यों को अपनी व्यक्तिगत व सामाजिक उन्नति में स्वाध्याय व संगति पर ध्यान देना चाहिये।

मनुष्य की उन्नति के लिये अच्छा साधन यह है कि वह अपने निकटवर्ती आर्यसमाज का सदस्य बन जाये और उसके प्रत्येक सत्संग एवं आयोजन में अपने परिवार के सदस्यों के साथ जाने का नियम बना लें। आर्यसमाज में जाने से अनेक लाभ होते हैं। हम समझते हैं कि यदि कहीं अच्छा आर्यसमाज है जहां के अधिकारी व सदस्य अच्छे गुणों से युक्त हैं, तो वहां का सदस्य बनने पर अनेक लाभ हो सकते हैं। आर्यसमाज में प्रत्येक रविवार को प्रातः ८.०० बजे से १०.०० बजे तक सत्संग होता है। सत्संग में समाज की यज्ञशाला में प्रथम सन्ध्या व अग्निहोत्र यज्ञ का अनुष्ठान किया जाता है। एक पुरोहित जी होते हैं जो यज्ञ कराते हैं और बाकी यजमान व यज्ञ प्रेमी बन्धु होते हैं। सत्संग में जाने और सन्ध्या यज्ञ में भाग लेने से वह लोग जो सन्ध्या व यज्ञ नहीं जानते, वह सन्ध्या व यज्ञ करना सीख जाते हैं। सन्ध्या मनुष्य का ईश्वर के साथ मिलन तथा दोनों आत्माओं, ईश्वर व मनुष्य के परस्पर एक दूसरे से जुड़ने को कहते हैं। इससे मनुष्य की आत्मा के दोष दूर होते हैं तथा ईश्वर के गुणों के अनुरुप मनुष्य के गुणों में सुधार होता है। प्रतिदिन प्रात व सायं घर पर भी सन्ध्या करने से मनुष्यों के दुर्गुण व दुःख दूर होते रहते हैं और उसमें सद्गुणों का विकास होता है। सन्ध्या का एक अंग स्वाध्याय भी है। सन्ध्या में आत्म-चिन्तन, मनन, विचार आदि भी सम्मिलित हैं। यही मनुष्य जीवन की उन्नति को प्राप्त करने वाले साधन व उपाय हैं। अतः आर्यसमाज के सत्संग में जाने का पहला लाभ तो सन्ध्या करने, उसे सीखने और उससे अपने दुर्गुणों, दुर्व्यसनों का त्याग, दुःखों की निवृत्ति का होता है और उसी के साथ ईश्वर के श्रेष्ठ गुणों का आत्मा पर आधान व उनका आरोपण भी होता है।

आर्यसमाज में सन्ध्या के बाद अग्निहोत्र, देवयज्ञ का आरम्भ होता है। यज्ञ में वेद मन्त्रों का उच्चारण होता है, जिसमें ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना होती है। यज्ञ करने के लाभ भी मन्त्रों में निहित होते हैं। मनुष्य को ऐसा करने पर अनायास ही यज्ञ के मन्त्र कण्ठस्थ हो जाते हैं। इसके बाद वह अपने घर पर वैदिक व विशेष अवसरों पर स्वमेव यज्ञ कर सकता है। यज्ञ करने से मनुष्य की सभी सात्विक व पवित्र इच्छायें पूरी होती है। हम ऐसा मानते हैं कि ईश्वर सर्वशक्तिमान है। वह सर्वान्तर्यामी है। वह हमारे

प्रत्येक भाव व विचार को जानता है। जब हम उससे प्रार्थना करते हैं तो उसे हमारे उन विचारों का पूरा-पूरा ज्ञान होता है। यज्ञ करने से मनुष्य में वह पात्रता आ जाती है कि ईश्वर उसके दोषों को छुड़ा कर उसका अज्ञान दूर कर उसे विद्या का दान दें। विद्या प्राप्त हो जाने पर मनुष्य के सभी मनोरथ पूर्ण हो सकते हैं, ऐसा माना जा सकता है। यज्ञ करने से मनुष्य के शुभ कर्मों के खाते में भी वृद्धि होती है। उन कर्मों से उसे वर्तमान व भविष्य में सुख लाभ होता है। प्रतिदिन प्रातः व सायं यज्ञ करने से ईश्वर की निकटता व शुभ कर्म के कारण उसकी अविद्या दूर होकर उसे सद्ज्ञान प्राप्त होकर वह सन्मार्ग की ओर बढ़ता जाता है। ऐसा करने से अपनी इच्छानुसार किसी अच्छे व्यवसाय की प्राप्ति सहित गृहस्थ जीवन में सुख व शान्ति की उपलब्धि का लाभ होता है। अतः आर्यसमाज के सत्संग में जाने, वहां सन्ध्या व यज्ञ में भाग लेने, उससे सन्ध्या व यज्ञ करने की विधि-विधान का ज्ञान होने, यज्ञ के श्रेष्ठतम कर्म होने तथा उससे होने वाले अनेकानेक लाभों की प्राप्ति होने से मनुष्य अनेक-अनेक प्रकार से लाभान्वित होता है। हमने अपने जीवन में इन लाभों को प्राप्त किया है। इसी कारण सन्ध्या व यज्ञ के विषय में हम यह बात कह रहे हैं। जो भी मनुष्य आर्यसमाज के सत्संग में जायेगा उसको यह सभी लाभ अवश्य प्राप्त होंगे।

यज्ञ में गोघृत, वनस्पतियों व ओषधियों सहित मिष्ट तथा स्वास्थ्यवर्धक भक्ष्य पदार्थों की आहुतियां दी जाती है। अग्नि इन पदार्थों को सूक्ष्म कर वायु में फैला देती है। जितनी तीव्र अग्नि होती है उतने ही आहुति के पदार्थ सूक्ष्म होकर यज्ञ कुण्ड की चारों दिशाओं में फैल जाते या भर जाते हैं। इससे जो वायु मण्डल बनता है उसमें श्वांस लेने से वह वायु हमारे शरीर में प्रविष्ट होकर, हमारे फेफड़ों में रक्त से मिलकर उसमें विकारों की निवृत्ति व सुधार कर मनुष्य के अनेक रोगों को दूर करती है व हमें रोग से बचाने में सहायक होती है। रोगों से बचने व शरीर में आ गये रोगों को दूर करने का यह भी एक वैज्ञानिक व धार्मिक तरीका है। आर्यसमाज में यज्ञ के मध्य पुरोहित जी कई बार कुछ विशेष निर्देश भी देते है, जिनका श्रोता व यज्ञ करने वालों को ज्ञान नहीं होता। सत्संग में जाने से यह लाभ भी होता है। पुरोहित जी अपनी योग्यतानुसार यज्ञ के कुछ मन्त्रों की कई बार प्रसंगवंश व्याख्या भी करते हैं। सब विद्वानों की अपनी-अपनी शैली होती है जो उनके ज्ञान पर आधारित होती है। पुरोहित जी से वेद मन्त्रों की व्याख्या में कई बार कुछ महत्वपूर्ण बातें सुनने का अवसर मिल जाता है। यह बातें हमें जीवन भर याद रहती है और हमारा मार्गदर्शन करती है। अतः यज्ञ में जाने से मनुष्य को यह लाभ भी होता है। यह सब लाभ निःशुल्क हो रहे हैं। इन लाभों पर विचार करें तो यह मनुष्य के जीवन को दीर्घकाल व मृत्युपर्यन्त मार्गदर्शन करते व सुखी रखते हैं। सन्ध्या व यज्ञ के महत्व व लाभ का आर्थिक आधार पर आकंलन नहीं किया जा सकता। हम लाखों रुपये व्यय करके भी कई बार वह लाभ प्राप्त नहीं कर सकते जो कि हमें आर्यसमाज में अनेक विद्वानों के बीच सन्ध्या व यज्ञ में बैठने व उनकी बातों को सुनने से प्राप्त हो जाते हैं।

सन्ध्या व यज्ञ लगभग आधे से एक घण्टे में सम्पन्न हो जाता है। इसके बाद भजनों का कार्यक्रम होता है। लगभग १५ से ३० मिनट तक यह कार्यक्रम चलता है। भजनों का मनुष्य की मन व आत्मा पर गहरा प्रभाव पड़ता है। प्रवचन सुनकर भी प्रभाव पड़ता है, परन्तु यदि भजन प्रभावशाली रुप से गाया जाता है, तो वह अधिक प्रभाव उत्पन्न करता है। अल्प शिक्षित व अशिक्षित बन्धु भजनों से अधिक लाभान्वित होते हैं। भजन मन व आत्मा को उद्वेलित करता है। बहुत से प्रसिद्ध भजनों को विद्वान भी प्रायः गुनगुनाते दीखते हैं एवं मोबाइल, अपने कम्प्यूटर व टीवी आदि के माध्यम से सुनते रहते हैं। हमने एक बार एक पौराणिक कथावाचक के सत्संग में एक आर्यसमाजी भजन सुना था। हमने उनके प्रवचन की दो कैसेट ले ली थी, जिसमें वह भजन था। उस भजन को हम यदा कदा सुनते रहते थे। आर्यसमाज में वह भजन कभी सुनने को नहीं मिला। कुछ दिन पहले हमने भजनोपदेशक श्री नरेशदत्त आर्य जी से उसकी चर्चा की तो उन्होंने उसे किसी कार्यक्रम में हमें सुनाने को कहा। एक दिन जब उन्होंने वह गीत वैदिक साधन आश्रम तपोवन के सत्संग में सुनाया तो उस

समय हम वहां उपस्थित नहीं थे। उनके बताने पर हमें उसे न सुन पाने का दुःख हुआ। कुछ ही दिन पहले हमें वह पूरा भजन यूट्यूब पर मिल गया है। पहले भी हम खोजते रहे परन्तु वह पूरा भजन नहीं मिला था। अब हमें यह भजन एक आर्य भजनोपदेशक तथा एक पौराणिक कथावाचक का गाया हुआ मिला है। भजन के शब्द हैं- ***"किसने दीप जलाया, दीप जलाकर किया उजाला अपना आप छुपाया, किसने दीप जलाया है। वह कौन कहां का वासी, कैसे कोई बताये। नहीं किसी ने देखा उसको, ऋषि जनों ने पाया।"*** ऐसे कुछ अन्य भजन भी हैं जिनमें से एक पं. सत्यपाल पथिक जी का - ***"डूबतो को बचा लेने वाले मेरी नैया है तेरे हवाले। लाख अपनों को मैंने पुकारा सब के सब कर गये हैं किनारा, अब कोई देता नहीं है दिखाई, अब तो बस एक तेरा ही सहारा। कौन भवरों में किश्ती निकाले, मेरी नैया है तेरे हवाले। डूबतो को बचा लेने वाले मेरी नैया है तेरे हवाले।"*** भजन सुनने पर हमें लगता है कि आत्मा को एक अकथनीय सुख की अनुभूति होती है। आर्यसमाज में जाने पर यदा कदा वहां कोई अच्छा गायक मिल जाता है जिससे आत्मा को एक विशेष सुखानुभूति होती है। यह लाभ भी हमें सत्संग में जाने का विशेष लाभ लगता है।

भजनों के बाद सत्यार्थ प्रकाश का पाठ एक सामूहिक प्रार्थना की जाती है। इनका अपना महत्व एवं लाभ है। इनकी चर्चा हम लेख के विस्तार के कारण छोड़ रहे हैं। इनके बाद किसी विद्वान् का प्रवचन होता है। जो लोग स्वाध्याय नहीं करते उनके लिये प्रवचन आत्मा को ज्ञान देने व कराने की एक विशेष पद्धति कही जा सकती है। आर्यसमाज में ईश्वर, जीवात्मा, सत्संग, सन्ध्या, यज्ञ, माता-पिता की सेवा, आचार्य व विद्वानों का सम्मान, समाज सुधार, देशोन्नति, अन्धविश्वास निवारण, चरित्र का महत्व, व्यस्नों से हानियां आदि अनेक विषयों पर विद्वानों के प्रवचन व व्याख्यान होते हैं। इससे सत्संग में उपस्थित श्रोतागण नि विषयों पर अच्छी जानकारी प्राप्त कर लेते हैं। उन्हें यह लगता है कि यहां जो बातें कही जाते है उसे हमें अपने जीवन में अपनाना चाहिये। समाज सुधार का यह एक प्रभावशाली तरीका है। समय-समय पर किसी शंका के उपस्थित होने पर उनसे मिलकर दूरभाष व पत्र व्यवहार से शंका समाधान भी कर सकते हैं।

आर्यसमाज में नगर के अनेक प्रतिष्ठित लोग भी आते हैं। उनसे सम्पर्क होने से कुछ से मित्रता हो जाती है। यह सम्पर्क जीवन में अनेक प्रकार से लाभ पहुंचाते हैं। हम सब आर्यसमाज के सम्पर्क में आये थे तब आर्यसमाज के यहां दो गुट थे। एक ऐसा था जो हमें ऋषि दयानन्द के मार्ग पर चलने वाला लगा था। उनमें विद्वान भी थे और हम उन्हें आर्यसमाज के हित की बातें करते हुए देखते थे। हमारे अनेक मित्र स्वाध्यायशील भी थे। ऐसे सभी लोगों से हमारी मित्रता हुई जो आज भी जारी है। अनेक लोग दिवंगत हो चुके हैं। आर्यसमाज का हमारे जीवन पर ऐसा प्रभाव पड़ा की हमने आर्यसमाज से इतर विचारों वाले बन्धुओं को अपना गहरा मित्र नहीं बनाया। उनसे हमारे सम्पर्क व प्रभाव पड़ा की हमने आर्यसमाज से इतर विचारों वाले बन्धुओं को अपना गहरा मित्र नहीं बनाया। उनसे हमारे सम्पर्क व सम्बन्ध यद्यपि आत्मीयता के रहे, परन्तु वह सब व्यवसायिक व सामाजिक सम्बन्धों तथा दायित्वों के निर्वाह मात्र तक सीमित थे। हमारी जितनी भी मित्र मण्डली है वह ९० प्रतिशत से अधिक ऋषिभक्तों, आर्यसमाज के विद्वानों एवं सदस्यों की ही है। इसी प्रकार के लाभ सभी बन्धुओं के आर्यसमाज के सत्संग में जाने से होते हैं। इन लाभों को प्राप्त करने के लिये हमें कुछ व्यय नहीं करना पड़ता। आर्यसमाज में जाने पर वहां हमें अनेक विषयों के साहित्य का भी ज्ञान भी होता है और उनमें से अनेक ग्रन्थ विक्रयार्थ उपलब्ध भी होते हैं।

वहां के पुस्तकालयों में भी अनेक दुर्लभ ग्रन्थ होते हैं, जिनसे हम लाभान्वित हो सकते हैं। प्रवचन की समाप्ति पर मंत्री जी द्वारा आर्यजगत व समाज विषयक सूचनायें दी जाती है। संगठन, सूक्त व शान्तिपाठ होता है। अन्त में प्रसाद वितरण भी होता है। इस प्रकार से मनुष्य आर्यसमाज से जुड़कर एक सामाजिक प्राणी बन जाता है जिससे उसे निजी लाभ प्राप्त होने के साथ देश व समाज को उसकी विविध सेवाओं से लाभ होता है। अतः

आर्यसमाज में जाना मनुष्य की शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक उन्नति में सहयोगी होता है।

आर्यसमाज में हम वेदों की मान्यताओं व सिद्धान्तों पर ही प्रायः सुनते हैं। इनका संस्कार हमारी आत्मा व मन पर होता है। मनुष्य की आत्मा में व मन में जो विचार, भाव या संस्कार होते हैं उसी के अनुरुप मनुष्य का जीवन बनता है। अतः आर्यसमाज के सत्संग व वैदिक साहित्य के स्वाध्याय से मनुष्य का जीवन शून्य से शिखर तक पहुंचता है। सभी मनुष्यों को परिवार सहित आर्यसमाज के सत्संगों में जाना चाहिये और उसका सदस्य बनना चाहिये। आर्यसमाज के १० स्वर्णिम नियम हैं। उनको कण्ठ कर लेना चाहिये। आर्यसमाज का चौथा नियम है सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। इस मन्त्र की भावना को अपने जीवन में आत्मसात करना चाहिये। आर्यसमाज में भी यदि किसी सदस्य या अधिकारी में पदेषणा या अन्य विद्वानों की निन्दा आदि कोई दुर्गुण प्रतीत होता हो तो उसकी अधिक संगति न करें। जो पूर्णतया निष्पक्ष हो, उन्हीं की संगति करें। हमने इन बातों से दूर रहकर व आर्यसमाज साहित्य के स्वाध्याय में संलग्न रहकर अधिक लाभ प्राप्त किया है। हम स्वाध्याय व लेखन द्वारा प्रचार को महत्व देते रहे हैं। इसमें हमें व समाज को लाभ हुआ है। इससे हम अनेक प्रकार के विवादों से भी बचे हैं। कुल मिलाकर आर्यसमाज के सत्संग से मनुष्य को अनेकाविध लाभ होते हैं।

पता - १९६, चुक्खूवाला-२, देहरादून-२४८००१

सावधान हमारे बच्चे और नशे का मायाजाल

– गीतावंद, शिक्षिका

'नशा' यह शब्द अपने आप में एक विप्लव है, एक तूफान है। यह मायाजाल है, जो मुग्ध करती है। लोग इससे बचने की नसीहते तो देते हैं, पर शायद स्वयं भी इससे अछूते नहीं रह पाते। 'नशा' शब्द का विस्तृत व्याख्या करना चाहे तो हम कह सकते हैं, आदत, लत, धुन। सो नशा अपने आप में बुरा नहीं, अवलम्बित इस पर है नशा किस चीज का हो। सफल होने का नशा, पैसा कमाने का नशा, समाज-सेवा का नशा या फिर स्वयं के विनाश का नशा। यहां आकर हमारी विषय-वस्तु थोड़ी संकुचित हो जाती है क्योंकि हमने निबन्ध का विषय एवं गुढ़ार्थ होनों ही बचपन एवं नशा पर केन्द्रित किया है। सो इसी विषय-वस्तु को आगे बढ़ाते हुए सबसे पहले हम आपको समस्या के तह तक ले जाना चाहते हैं। आखिर वे कौन सी परिस्थितियाँ हैं जो किशोर होते हुए बालक-बालिकाओं को नशे की दुनियां में खींच ले जाती है। मैं यह नहीं कहूंगी कि पूरी दुनिया का किशोर नशे में रत है, पर एक सरसरी सी दृष्टि डालें तो यह तय पाते हैं कि वह या तो झुग्गी-झोपड़ियों जैसे निचले तबके से है या अति आधुनिकता की दौड़ में शामिल उच्च वर्ग समझी जाने वाली पाश्चात्यानुकरणीय परिवारों से है। तो क्या ? यह मान लेना लाजिमी होगा कि कहीं न कहीं अभाव व प्रचुरता दोनों सहोदरा है। अभाव यानी नहीं प्रचुरता यनी इतना अधिक कि मन उससे, विरक्त हो तो अर्थात् वह भी शून्य है। तो इससे छनकर जो दार्शनिक दृष्टि उभरती है वह यह है कि एक ऐसे स्तर पर पहुंच कर होना या न होना दोनों कोई महत्त्व नहीं रखते एवं मन भटकता है एक अज्ञात आनन्द को पाने के लिए। वह आनन्द शायद वह नशे में पाता है और निरन्तर उसका आदी हो जाता है।

एक और महत्त्वपूर्ण तथ्य है जो इस परिप्रेक्ष्य में मायने रखता है - पालन-पोषण का ढंग। जहां तक मेरा मानना है आजकल, जब समाज में हर मोड़ पर तो सारी सामग्री बिखरी है जो बात-मन में उत्तेजित करती है, ऐसे में माता-पिता को उस नट के समान बनाना होगा जो गति और संतुलन को सादा कर रस्सी पर आगे बढ़ता हो। बच्चों का कहां और कितनी आजादी देनी है, और यदि नहीं देनी है तो बच्चे को भरोसा दिलाना होगा कि बंदिशों को वह अपना शोषण न समझे। यह एक अग्नि परीक्षा है जिसे हर अभिभावक को पार करनी है, जरा सी चूक जीवन को प्रभावित कर सकती है। ऐसे में आशा की एक किरण समाज की ओर उठती है कि शायद हमारा समाज आर्यवीर दयानन्द जैसा कोई हीरा दे दो इस लड़ाई का अगुआ बन एक ऐसा संग्राम छेड़े जिसका उद्देश्य हो - सहेजो बचपन, सँवारों देश।

पता - डी.ए.वी. इस्पात पब्लिक स्कूल, नंदिनी भिलाई

संदेशात्मक

"लहरायेगा लहरायेगा प्यारा झण्डा ओ३म् का"

- रघुराज शास्त्री

कोट किले दीवारों पर, मन्दिर और गुरुद्वारों पर।
मस्जिद को मीनार में, यह प्यारा झण्डा ओ३म् का॥
लहरायेगा....
लाल किले की चोटी पर, प्रधानमंत्री की कोठी पर।
राष्ट्रपति की कार में, यह प्यारा झण्डा ओ३म् का॥
लहरायेगा....
अमरीका और जापान में, रुस पाकिस्तान में।
यूरोप के मैदान में, यह प्यारा झण्डा ओ३म् का॥
लहरायेगा....

सम्प्रति भारत जय श्रीराम के उद्घोष के साथ विश्व गुरु बनने की ललक रख रहा है। वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी भारत को विश्व गुरु बनाने में प्रयत्नशील है। उसी की पृष्ठभूमि में २१ जून को विश्व योग दिवस के रुप में मनाना प्रारम्भ हुआ है। अनेक देशों ने योग को स्वास्थ्य के साथ आत्मिक उन्नति का साधन मान लिया है। स्वामी रामदेव जी का भी कहना है - करो योग, रहो निरोग। यह उन्होंने विश्व को करके भी दिखा दिया है। जो भी योग करेगा वह स्वस्थ रहेगा, प्रसन्न रहेगा और आध्यात्मिक उन्नति भी करेगा।

परमात्मा का नियम है कि जो उसकी आज्ञा के विरुद्ध चलेगा वह बहुत दिन तक नहीं चल पाएगा। वेद का आदेश है - **"अद्य जीवासि मा स्वः"**। अर्थात् अन्यायी शासक आज जीवित है, कल नहीं रहेगा। दुनियां में जितने भी शासक हैं जो भी जनता के साथ अन्याय करेगा, जनता उसे सहन नहीं करगी उसे अधिकार से वंचित कर देगी। यह सृष्टि का क्रम चलता रहेगा।

अब चक्रवर्ती सम्राटों के वंशजों के खून में उबाल आया है। ये पहले अपने राष्ट्र को संगठित करके आर्यावर्त की पूर्व सीमाओं तक ले जावेंगे। ज्यों ही आर्यावर्त अपनी पूर्व सीमाओं तक पहुंच जावेगा फिर दुनियां में कोई ताकत नहीं कि इसे चक्रवर्ती बनने से रोक सके। अमेरिका तो भारत को धीरे स्वर में शक्तिमान मान ही चुका है, रुस भी कुछ समय बाद भारत को मान्यता देगा ही। रही बात चीन की तो चीन से कुछ संघर्ष करना पड़ेगा क्योंकि सियाचिन पर उसकी मृदु दृष्टि बनी हुई है।

चीन को परास्त करने के पश्चात् भारत को चक्रवर्ती सम्राट बनने में विलम्ब नहीं लगेगा। चक्रवर्ती सम्राट बनते ही योग एवं अपनी संस्कृति के द्वारा भारत का विश्व गुरु बनना निश्चित होगा। **"सा संस्कृतिः प्रथमा विश्ववारा।"** यही संस्कृति विश्व को वरणीय है, माननीय है। संस्कृति, धर्म, सत्य एक ही है। संस्कृति एक है, धर्म एक है, सत्य एक है। इसी सत्य की विजय होगी। सत्यमेव जयते सार्थक होगा। अहं भूमिमददामार्याम मैंने यह भूमि आर्य सम्राट को दी है। परमात्मा की वेदवाणी तब सत्य होगी और कृण्वन्तो विश्वमार्यम् तब पूर्ण होगी।

पता : आर्य समाज वेद मंदिर, १३ ब्लाक,
गोविन्द नगर, कानपुर-६

बुढ़ापा देखता है, सोचता है, बैठ जाता है।
जवानी देखती है, सोचती है, कूद पड़ती है॥
जवानी वह कि जो तूफान को रफ्तार देती है।
जवानी जिन्दगी को मौज का अधिकार देती है॥
गया डर जो, बुढ़ापा ही कहो, उसकी जवानी को।
जवानी मौत को भी हो, निडर ललकार देती है॥

स्वामी दर्शनानन्द

डॉ. अशोक आर्य (मण्डी डबवाली), आर्य कुटीर, ११६, मित्र विहार, १२५१०४, हरियाणा

१५ नवम्बर जयंती

आर्य समाज के महान् दार्शनिक स्वामी दर्शनानन्द जी का जन्म कुलीन ब्राह्मण रामप्रताप निवासी जगराओं जिला लुधियाणा, पंजाब के यहाँ माघ कृष्ण १० सं. १९१८ वि. (इस वर्ष १५ नवम्बर जन्म दिन) को हुआ। आरंभिक नाम नेतराम को बदल कर कृपाराम रखा गया। फारसी व संस्कृत की शिक्षा प्राप्त की तथा ११ वर्ष की आयु में विवाह हो गया। वैराग्य वृत्ति वाले कृपाराम ने पिता के व्यापार को सम्भालने में कुछ भी रुचि न ली। घूमते हुए अमृतसर में महर्षि के विचार सुन नवीन वेदान्ती कृपाराम पर दयानन्द का रंग चढ़ गया। आपने महर्षि के ३७ व्याख्यान सुने तथा इतने वर्ष ही आर्य समाज की सेवा का गौरव भी पाया। काशी जाकर दर्शनों का विस्तृत अध्ययन किया तथा जो पैसा वह लेकर गए थे, उससे काशी में "तिमिर नाशक यन्त्रालय" स्थापित किया। यहां से व्याकरण व अनेक आर्ष ग्रन्थ छापकर विद्यार्थियों को सस्ते दामों में दिये। इससे छात्र मण्डली में अच्छी प्रसिद्धि मिली। १९९३-९४ में पंजाब तथा १८९९-१९०० में आगरा में प्रचार किया तथा लघु प्रचार पुस्तकें लिखना, व्याख्यान देना व शास्त्रार्थ आपके दैनिक कर्म बन गए। आगरा में ही पं. भीमसेन शर्मा से शास्त्रार्थ हुआ तथा अगले वर्ष ही गंगातट के राजघाट स्थान पर स्वामी अनुभवानन्द से संन्यास लेकर दर्शनानन्द स्वामी के नाम से प्रचार में जुए गए।

आर्य समाज के शास्त्रार्थियों में आप का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। सभी मतानुयायियों से अनेक शास्त्रार्थ किये। इस क्षेत्र में आपने अपनों को भी नहीं छोड़ा तथा वृक्षों में जीव विषय पर पं. गणपति शर्मा जी से भी उलझ पड़े, जो कि आर्यसमाज के सम्मानित प्रवक्ता थे। आपने प्रचार में पत्र व पत्रिकाओं के महत्व को खूब पहचाना। अतः आपने एक के बाद एक कुल एक दर्जन के लगभग उर्दू व हिन्दी पत्रिकाओं का सम्पादन किया। आपके प्रचार काल में आपके प्रचार क्षेत्र की भाषा उर्दू होने के कारण आपका अधिकांश लेखन व अधिकांश पत्रिकाएं उर्दू में ही रहीं। यह सब करते हुए भी आपने गुरुकुलों की वृद्धि में अपना पूरा ध्यान दिया। आप गुरुकुल शिक्षा के महत्त्व को अच्छी प्रकार समझते थे। आप नेतागिरी पसन्द न करते "काम करो व भूल जाओ" की भावना आपमें अति बलवती थी। इसीके मध्य दृष्टि आपकी सदा यही नीति रही कि आपने मेहनत करके गुरुकुलों की स्थापना की, अच्छी प्रकार व्यवस्थित होने के पश्चात् इन्हें सुयोग्य हाथों में सौंप दिया। आपने सिकन्दराबाद से रावलपिंडी तक अनेक गुरुकुलों की स्थापना की। वर्तमान गुरुकुल ज्वालापुर भी आपके प्रताप का ही गुणगान कर रहा है। जहां तक लेखिनी का प्रश्न है. इस क्षेत्र में भी आपकी देन अभूतपूर्व ही रही है। आपने जितनी मात्रा में तथा जितना गुणों से युक्त साहित्य विरासत में दिया, इतना बहुत कम आर्य महापुरुष ही लिख पाए हैं। आपके लेखन के विषय में यह प्रसिद्ध है कि आप प्रतिदिन किसी गहन प्रचारात्मक विषय पर एक लघु पुस्तक लिखा करते थे। इनकी निश्चित संख्या बताना अनुमान से परे हैं। दर्शनों पर आपके तार्किक भाष्य तथा छः उपनिषदों पर अत्यन्त सरल व्याख्या देकर इसे आपने सर्व सुलभ बना दिया। मनु स्मृति व गीता की टीका भी आपकी लेखनी के दर्शन कराती है। भारी संख्या में अन्य मतों की समीक्षा में भी अनेक पुस्तकें लिखीं। आप न केवल नियमित देशाटन करते रहे अपितु लेखन, प्रचार व शास्त्रार्थों में भी आपने कभी विराम न आने दिया। परिणामस्वरुप स्वास्थ्य में गिरावट आना स्वाभाविक ही था। अतः हाथरस अस्पताल में चिकित्सा के मध्य आपका देहान्त ११मई को हो गया। आपके निधन से एक महान् शास्त्रार्थ अद्वितीय प्रचारक, अभूतपूर्व वैदिक लेखक, गुरुकुलों की संख्या बढ़ाने वाला यह सितारा ऐसा विदा हुआ कि इस क्षति को पूरा कर पाना हमारे लिए असम्भव हो गया। यदि उनके जीवन से कुछ प्रेरणा लेकर हम भी स्वाध्याय व प्रचार को बढ़ा सकें तो यह उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी। ●

पुण्य स्मरण

क्रांतिकारी भाई परमानन्द या पं. परमानन्द

- डॉ. विवेक आर्य

भाई परमानन्द या पण्डित परमाननंद (४ नवंबर, १८७६, ८ दिसम्बर १९४७) भारत स्वतन्त्रता संग्राम के महान क्रांतिकारी थे। वे बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी महापुरुष थे। वे जहां आर्यसमाज और वैदिक धर्म के अनन्य प्रचारक थे, वहीं इतिहासकार, साहित्यमनीषी और शिक्षाविद् के रुप में भी उन्होने ख्याति अर्जित की थी। सरदार भगतसिंह, सुखदेव, रामप्रसाद बिस्मिल, करतार सिंह सराबा जैसे असंख्य राष्ट्रभक्त युवक भाई जी से प्रेरणा प्राप्त कर बलि-पथ के राही बने थे।

भाई जी का जन्म ४ नवम्बर १८७६ को जिला जेहलम (अब पाकिस्तान में) के करियाना ग्राम में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनके पिताजी का नाम भाई ताराचन्द था। इसी पावन कुल के भाई मतिदास ने हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए गुरु तेगबहादुर जी के साथ दिल्ली पहुंच कर औरंगजेब की चुनौती स्वीकार की थी। सन् १९०२ में भाई परमानन्द ने शिक्षा प्राप्त करके लाहोर के दयानन्द एंग्लो महाविद्यालय में शिक्षक नियुक्त हुए।

अफ्रीका में वैदिक धर्म पर व्याख्यान देने के लिए सन् १९०५ में भाई जी अफ्रीका पहुंचे। डर्बन में भाई जी की गांदी जी से भेंट हुई। अफ्रीका में उस समय अप्रवासी भारतियों को ईसाई बनाने का जोर था, भाई जी के भाषणों से चेतना का प्रसार पुआ और ईसाई धर्म अंतरण पर रोक लगी, वहां से भाई जी लन्दन चले गए। वहां उन दिनों श्री श्यामजी कृष्म वर्मा तथा सावरकर जी क्रांतिकारी कार्यों में सक्रिय थे। भाई जी दोनों के सम्पर्क में आए।

भाई जी सन् १९०७ में भारत लौट आए। दयानन्द वैदिक महाविद्यालय में पढ़ाने के साथ-साथ वे युवकों को क्रांति के लिए प्रेरित करने के कार्य में सक्रिय रहे। सरदार अजित सिंह और लाला लाजपतराय जी से उनका निकट का सम्पर्क था। उसी दौरान लाहौर पुलिस उनके पीछे पड़ गई। सन् १९१० में भाई जी को लाहौर में गिरफ्तार कर लिया गया। किन्तु शीघ्र ही उन्हें जमानत पर रिहा कर दिया गया। इसके बाद भाई जी अमरीका चले गए तथा वहां उन्होने अप्रवासी भारतीयों में वैदिक (हिन्दू) धर्म का प्रचार किया। लाला जी के आदि के साथ वे भारत की स्वाधीनता के लिए प्रयासरत रहे। करतार सिंह सराबा, विष्णु गणेश पिंगले तथा अन्य युवकों ने उनकी प्रेरणा से अपना जीवन भारत की स्वाधीनता के लिए समर्पित करने का संकल्प लिया। १९१३ में भारत लौटकर भाई जी पुनः लाहौर में युवकों को क्रांति की प्रेरणा देने के कार्य में सक्रिय हो गए।

भाई जी द्वारा लिखी पुस्तक, "तवारीख-ए-हिन्द" तथा उनके लेख युवकों को सशस्त्र क्रांति के लिए प्रेरित करते थे। २५ फरवरी १९१५ को लाहौर में भाई जी को गिरफ्तार कर लिया गया। उनके विरुद्ध अमरीका तथा इंग्लैण्ड में अंग्रेजी सत्ता के विरुद्ध षड़यंत्र रचने, करतार सिंह सराबा तथा अन्य अनेक युवकों को सशस्त्र क्रांति के लिए प्रेरित करने, आपत्तिजनक साहित्य की रचना करने जैसे आरोप लगाकर फांसी की सजा सुना दी गई। सजा का समाचार मिलते ही देशभर के लोग उद्‌विग्न हो उठें। अन्ततः भाई जी की भांसी की सजा रद्द कर उन्हें आजीवन कारावास का दण्ड देकर दिसम्बर १९१५ में अण्डमान (कालापानी) भेज दिया गया। उधर भाई जी जेल में अमानवीय यातनाएँ सहन कर रहे थे, इधर उनकी धर्मपत्नी श्रीमती भाग्यसुधि धनाभाव के बावजूद पूर्ण स्वाभिमान और साहस के साथ अपने परिवार का पालन-पोषण कर रही

थीं। अंडमान की कालकोठरी में भाई जी को गीता के उपदेशों ने सदैव कर्मठ बनाए रखा। जेल में श्रीमद्भगवद गीता संबंधी लिखे गए अंशों के आधार पर उन्होंने बाद में **"मेरे अन्त समय का आश्रय गीता"** नामक ग्रंथ की रचना की। गांधी जी को जब कालापानी में उन्हें अमानवीय यातनाएँ दिए जाने का समाचार मिला तो उन्होंने १९ दिसंबर १९१९ को **"यंग इंडिया"** में एक लेख लिखकर यातनाओं की कठोर भर्त्सना की। सी फ अंद्रव्स द्वारा उनकी रिहाई की भी मांग की गई। २० अप्रैल १९२० को भाई जी को कालापानी जेल से मुक्त कर दिया गया। कालेपानी की कालकोठरी में पांच वर्षों में भाई जी ने जो अमानवीय यातनाएँ सहन की, भाई जी द्वारा लिखित **'मेरी आपबीती'** पुस्तक में उनका वर्णन पढ़कर रोंगटे खड़े जो जाते हैं। प्रो. धर्मवीर द्वारा लिखित **'क्रांतिकारी भाई परमानन्द'** ग्रंथ में भी इन यातनाओं का रोमांचकारी वर्णन दिया गया है।

जेल से मुक्त होकर भाई जी ने पुनः लाहौर को अपना कार्य क्षेत्र बनाया। लाला लाजपतराय भाई जी के अनन्य मित्रों में थे। उन्होंने **"नेशनल कालेज"** की स्थापना की तो उसका कार्यभार भाई जी को सौंपा गया। इसी कालेज में भगतसिंह व सुखदेव आदि पढ़ते थे। भाई जी ने उन्हें भी सशस्त्र क्रांति के यज्ञ में आहुतियां देने के लिए प्रेरित किया। भाई जी ने **'वीर बंद बैरागी'** पुस्तक की रचना की, जो पूरे देश में चर्चित रही।

कांग्रेस तथा गांधी जी ने जब मुस्लिम तुष्टीकरण की घातक नीति अपनाई तो भाई जी ने उसका कड़ा विरोध किया। वे जगह-जगह हिन्दू संगठन के महत्व पर बल देते थे। भाई जी ने **'हिन्दू'** पत्र का प्रकाशन कर देश को खंडित करने के षड़यंत्रों को उजागर किया। भाई जी ने सन् १९३० में ही यह भविष्यवाणी कर दी थी कि मुस्लिम नेताओं का अंतिम उद्देश्य मातृभूमि का विभाजन कर पाकिस्तान का निर्माण है। भाई जी ने यह भी चेतावनी दी थी कि कांग्रेसी नेताओं पर विश्वास न करो, ये विश्वासघात कर देश का विभाजन कराएंगे। जब भाई जी की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई तथा भारत विभाजन और पाकिस्तान के निर्माण की घोषणा हई और लाखों हिन्दुओं को मौत के घाट उतार दिया गया, जिससे भाई जी के हृदय में एक ऐसी वेदना पनपी कि वे उससे उबर नहीं पाए तथा ८ दिसम्बर १९४७ को उन्होंने संसार से विदा ले ली। आज उनके जन्मदिन पर प्रेरणा पाकर हम देश और हिन्दू जाति की रक्षा के लिए प्रण करते हैं।

एक आर्य नेता का बड़प्पन

श्री केशवराम जी हैदराबाद राज्य के शीर्षस्थ नेताओं में से एक थे। वह हाईकोर्ट के जज बन चुके थे। एक बार वह राजकीय पद के नाते यात्रा करते हुए अपने गांव पुराजल पहुंचे। गांव में से निकलते हुये, उनकी दृष्टि एक व्यक्ति पर पड़ी। बड़ा बेडोल शरीर था। कपड़े तेल से सने हुए। देखते ही पता चलता था कि कोई तेली है। राव साहब पं. केशवराव पहचान गये कि उनका बाल्यकाल का लंगोटिया सखा कृष्णा है। इसके साथ राव साहब गोलिया खेला करते थे। न्यायमूर्ति केशवराव बड़े भावावेश में आकर उसके गले लिपट गये।

साथ चल रहे अधिकारी, कर्मचारी, सेवक प्रतिष्ठित नागरिक सब चकित रह गये। कृष्णा जान गया कि उसका लंगोटिया मित्र अब एक बड़ा नेता व हाईकोर्ट का जज बन चुका है फिर भी स्नेह से उस अकिंचन को गले लगा रहा है। इस दृश्य को देखकर कृष्णा के नयन सजल हो गये।

श्री कृष्णा ने सुदामा से यही व्यवहार तो किया था। अन्तर एक है सुदामा था तो विद्वान् एक तपस्वी ब्राह्मण। परन्तु बींसवी सदी ईस्वी का केशव जिस कृष्णा को छाती से लगाता है वह था मैले कपड़ों वाला एक तेली।

- ऋषि कुमार आर्य

होमियोपैथी से अस्थमा का उपचार

- डॉ. विद्याकान्त त्रिवेदी
(होमियोपैथिक चिकित्सक)
मोबा. : ९८२६५११९८३, ९४२५५१५३३६

अस्थमा पूरे विश्व में एक सामान्य बीमारी है, जो कि जानलेवा भी हो सकती है। ऐसे में होमियोपैथी उपचार लाभकारी होता है। यह अस्थमा के उपचार के लिये उपयोगी सिद्ध हुआ है और यह चिकित्सा का एक सम्पूर्ण तंत्र है, जो कि शरीर की प्राकृतिक तौर पर अपने आप चंगा होने की प्रवृत्ति को बढ़ाता है।फिर भी होमियोपैथी उपचार शुरु करने से पहले किसी होमियोपैथिक चिकित्सक की राय अवश्य लें।

अस्थमा के उपचार के लिए होमियोपैथिक औषधियाँ-

अस्थमा के उपचार के लिये अनेक होमियोपैथिक औषधियाँ बेहद उपयोगी है। अस्थमा के एक गम्भीर दौरे में आपको यह सलाह दी जाती है कि आप एक चिकित्सक से संपर्क करें। अस्थमा के गंभीर दौरे के खत्म होने के बाद होमियोपैथी उपचार लेने से भविष्य में होने वाले अस्थमा की बारंबारता और तीव्रता घट जाती है। अस्थमा के उपचार के लिए उपयोग में आने वाली औषधियों में से कुछ सामान्य **औषधियाँ** - अर्सेनिकम अलबम (अर्सेनिकम) : इस दवा का उपयोग सामान्य तौर पर एक एक्यूट अस्थमा के रोगी के लिए किया जाता है। इसका उपयोग आम तौरपर बैचेनी, भय, कमजोरी और आधी रात को या आधी रात के बाद इन लक्षणों का बढ़ना, जैसे लक्षणों से पीड़ित मरीजों के लिए किया जाता है।

हाऊस डस्ट माईट (हाऊस डस्ट माईट) :- इस दवा का उपयोग अक्सर ऐसे मरीजों के लिये किया जाता है, जिन्हें घर में होने वाली धूल से एलर्जी होती है। चूंकि लोगों में धूल की एलर्जी होना आम बात है, इस दवा को अस्थमा के एक गंभीर दौरे के लिए एक महत्वपूर्ण उपचार माना जाता है।

स्पोंजिआ (रोस्टेड स्पंज) :- यह उन अस्थमा से पीड़ित लोगों के लिए उपयोग में लाई जाती है, जिनको बेहद कष्टदायी खांसी होती है, और छाती में बहुत कम या बिलकुल भी कफ नहीं होता है। इस प्रकार का अस्थमा एक व्यक्ति को ठंड लगने के बाद शुरु होता है। इन मरीजों में अक्सर सूखी खांसी होती है।

लोबेलिआ (भारतीय तम्बाकू) :- इस दवा का उपयोग उन अस्थमा से पीड़ित लोगों के लिए बेहद फायदेमंद है, जिन्हें सांस की घबराहट के साथ एक लाक्षणिक (टिपिकल) अस्थमा का दौरा पड़ता है। (इसमें छाती में दबाव का एक अहसास और सूखी खांसी भी शामिल है)।

सेमबकस नाइग्रा (एल्डर) :- इस दवा का उपयोग उन अस्थमा से पीड़ित लोगों के लिए बेहद फायदेमंद है, जिन लोगों में सांस की घबराहट की आवाज के साथ दम घुटनेके लक्षण दिखाई देते हैं, खासकर यदि ये लक्षण आधी रात को या आधी रात के बाद, या लेटने के दौरान या जब मरीज ठंडी हवा के संपर्क में आते हैं, ऐसी स्थिति में अधिक बढ़ते हैं।

इपेकल्युआन्हा (इफेकाक रुट) :- इस दवा का उपयोग उन अस्थमा से पीड़ित लोगों के लिए बेहद फायदेमंद है, जिन लोगों की छाती में बहुत अधिक मात्रा में बलगम होता है।

एंटीमोनियम टर्टारिकम (टार्टर एमेटिक) :- इस दवा का उपयोग उन अस्थमा से पीड़ित बुजुर्गों और बच्चों के लिए बेहद फायदेमंद है, जिनकी पूर्ण श्वसन-प्रश्वसन प्रक्रिया में शिथिलता या तेजी हो।

चामोमिल्ला (चामोमिल्ला) :- ब्रायोनिआ (व्हाईट ब्रायोनी), काली ब्रायक्रोमिकम (बायक्रोमेट ऑफ पोटाश), नक्स वोमिका (पोइटजन नट) जैसी दवाईयां अस्थमा के उपचार के लिए उपयोग में लाई जाती है। नैदानिक जांच से पता चलता है कि अस्थमा के उपचार के लिए होमियोपैथिक दवाईयाँ असरकारक होती है।

अस्थमा एक गंभीर बीमारी है, जिसे एक प्रशिक्षित होमियोपैथिक चिकित्सक की देखरेख में ठीक किया जा सकता है। होमियोपैथिक औषधियाँ दीर्घकालिक अस्थमा में लक्षणों को नियंत्रित करने में मदद करती है। इसलिये योग्य होमियोपैथिक चिकित्सक की सलाह से अस्थमा पर नियंत्रण पाया जा सकता है। कई रोगी मेरे द्वारा उपचार कराकर ठीक हो गए हैं और कई रोगियों का उपचार चल रहा है।

पता : त्रिवेदी होमियो औषधालय, टाटीबन्ध रायपुर (छ.ग.)

"खबरदार"

पहरेदारों से कह दो खबरदार रहे
दुश्मन ललकार रहा है असरदार रहे
मुँह तोड़ जवाब देना
चाहे मुँह तोड़ देना
पग भर की धरती पर
कदम न रख पायें
रक्षकों से कह दो होशियार रहे
मुझे भरोसा है झुकने न दोगे शीश
चाहे कट जाये स्वयं का शीश
अबकी बार बचकर न जाने पाये
ऐसा सबक सिखाना
दुबारा जुर्रत कर न पाये
सिपाहियों से कह दो सरदार रहे
सवा लाख से एक लड़ाये
दुश्मन बचकर जाने न पाये
शुरु शत्रु ने किया खत्म तुम करो
रक्तबीज है शत्रु काली रुप रहें
पहरेदारों से कह दो खबरदार रहे
यूँ तो कहने की जरुरत नहीं
तुम तो रहते हो सदा तैयार
लेकिन इस बार छल से होगा वार
काट देना शत्रु की तलवार
धिक्कार से भर देना
जो रहे व्यर्थ में ललकार
समझ आ जाये उन्हें
हम वो हैं जो चिड़िया से बाज लड़ाते हैं
फिर भी फतह पाते हैं
वीर सपूत भारत के कहलाते हैं
सैनिकों समर में प्रस्थान करें
देश की आन-बान शान में
वृद्धि बेशुमार करें
ऐसा सबक सिखाना, बेवकूफों को
अबकी बार से समझदार रहें
आँख उठाकर देखे, आँख रहे न शेष
वीर जवानों पहरेदारों
सब होशियार रहे।

ले. **देवेन्द्र कुमार मिश्रा**, पाटनी कालोनी, भरतनगर, चन्दनगाँव, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) ४८०००१

इन्द्रिय विजय

तस्मात्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ।
पाप्मानं प्रजहिह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् ।। (गीता- अध्याय ३/४१)

अर्थात् : इन्द्रियां, मन और बुद्धि, काम तथा क्रोध के निवास स्थान है और इस (मन, बुद्धि और इन्द्रियों) के द्वारा ही ये ज्ञान को आच्छादित करके जीवात्मा को मोहित कर लेते हैं। इस कारण हे अर्जुन! पहले इन्द्रियों को वश में करके ज्ञान और विज्ञान को नाश करने वाले पापी (काम) को नष्ट कर।

समाचार प्रवाह

डी.ए.वी. छाल – छाया रहा

क्लस्तर स्तरीय क्रीड़ा स्पर्धा का हुआ आयोजन

रायगढ़ । विगत दिनों डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल एस.ई.सी.एल. कुसमुंडा कोरबा में आयोजित क्लस्तर स्तरीय प्रतिस्पर्धा में डी.ए.वी. छाल के खिलाड़ियों ने प्रतिभागिता ग्रहण की। जिसमें छाल के अभिषेक टंडन को १०० मी. दौड़, ४०० मी. दौड़ में गोल्ड और लंबी कूद में सिल्वर मैडल मिला। प्रतियोगिता में अभिषेक टंडन को ओवर ऑल एथलीट चैम्पियन घोषित किया गया। इसी तरह ताईक्वांडो खिलाड़ी आयुषी कठोतिया, भूमिका चन्द्रा, विस्मय प्रधान, दीपेश कुमार चन्द्रा को सिल्वर मैडल, आशुतोष चन्द्रा को तैराकी में ब्रांज, यशकुमार यादव को तवाफेंक में ब्रांज मैडल मिला। वालीबाल बालिका समूह में आशुसिंह, हिना कुमारी साहू, कनक साव, प्रगति चन्द्रा, रिया साहू, सिद्धि अग्रवाल, तामेश्वरी लहरे और वालीबाल बालक समूह में मयंक चन्द्रा, मेहुल बंसल, रोहन केवट, रोशन केवट, सुजल गवेल, यशकुमार यादव को सिल्वर मैडल मिला। ४ गुना ४०० मी. रिले दौड़ में अभिषेक टंडन, मेहुल बंसल, रोहन केवट तथा यशकुमार यादव की टीम को सिल्वर मैडल मिला।

इस उत्कृष्ट प्रदर्शन से विद्यालय के प्राचार्य श्री के.डी. शर्मा ने हार्दिक प्रसन्नता प्रकट करते हुए खेल प्रतिभाओं को स्नेहाशीष प्रदान कर भविष्य में भी इसी प्रकार के कीर्तिमान स्थापित करने की शुभकामनाएँ दी है। उपलब्धि के लिए शिक्षक-शिक्षिका समूह ने बच्चों की निरन्तर व सतत खेलभावना के लिए समर्पित क्रियाशीलता को एवं उनके शिक्षक द्वय को इसका श्रेय देते हुए बच्चों को हरदम आगे बढ़ते रहने की प्रेरणा प्रदान की है। *निजी संवाददाता - कार्यालय, डी.ए.वी. छाल*

नवप्रवेशित ब्रह्मचारियों का उपनयन संस्कार सम्पन्न

बड़ेडोंगर (बेड़ागांव) । दिनांक ३ नवम्बर २०१९ को बस्तर संभाग के अन्तर्गत कोण्डागांव जिले के बड़ेडोंगर (बेड़ागांव) में वैदिक ज्ञान योग एवं वैदिक चिकित्सा गुरुकुलम् समिति द्वारा संचालित आयुर्वेद चिकित्सा गुरुकुलम् में नवप्रवेशित ब्रह्मचारी एवं ब्रह्मचारणियों का उपनयन संस्कार सम्पन्न हुआ।

इस कार्यकम में छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के उपमंत्री (कार्यालय) आचार्य बलदेव राही सहित वेदपाठी पंकज आर्य, पं. ऋषिराज, अनिल आर्य, देवेन्द्र आर्य सहित आमंत्रित विद्वान् मुख्य रुप से उपस्थित रहे। यह संस्कार आचार्य स्वामी श्रीधर जी महाराज (हैदराबाद) के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ।

इस संस्कार में गुरुकुलम् के आचार्य डॉ. प्रवीरचन्द्र भंडारी एवं आचार्या श्रीमती निधि भंडारी जी का विशेष योगदान रहा। साथ ही इस कार्यक्रम की शोभा बढ़ाने व नवप्रवेशित ब्रह्मचारी तथा ब्रह्मचारणियों को आशीर्वाद प्रदान करने हेतु विभिन्न क्षेत्रों से आये हुए आर्यजन एवं नारायणपुर जिला चिकित्सालय से पधारे चिकित्सकों तथा ग्रामीण सदस्यों सहित स्थानीय सदस्य भारी संख्या में उपस्थित रहे।

इस कार्यक्रम में रायपुर से पधारे आचार्य बलदेव राही जी का संस्कार विषयक सारगर्भित उद्‌बोधन हुआ, इसी कड़ी में पं. ऋषिराज आर्य का सुमधुर वैदिक भजनोपदेश हुआ, जिससे वातावरण वैदिकमय हो उठा। इसी के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

- निजी संवाददाता

सफलता विज्ञान का वो सातवां सूत्र है, जिसके बिना, मनुष्य का जीवन पशु समान है। बिना ज्ञान-विज्ञान, मनुष्य का जीवन अधूरा है।

सभा उपप्रधान दयाराम वर्मा को पुत्र शोक : भावभीनी श्रद्धाञ्जलि

रायपुर। सभा के वरिष्ठ उपप्रधान एवं आर्यसमाज बैजनाथपारा रायपुर के प्रधान श्री दयाराम वर्मा के ज्येष्ठ पुत्र मृदुलभाषी एवं होनहार पुत्र श्री रमेश कुमार वर्मा उम्र लगभग ५० वर्ष का दिनांक ५ नवम्बर २०१९ को हृदयगति रुक जाने से आकस्मिक निधन हो गया। उनका अन्त्येष्टि संस्कार पं. काशीनाथ चतुर्वेदी एवं पं. सूरज आर्य के पौरोहित्य में वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। वे अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़ कर चले गए। इस अवसर पर सभा के प्रधान आचार्य अंशुदेव आर्य, आनन्द कुमार भोई बड़ेपन्थी सहित समस्त पदाधिकारी एवं अंतरंग सदस्य, श्री बी.पी. शर्मा, आर्यसमाज बैजनाथपारा रायपुर के पदाधिकारी व सदस्यगण, आर्यसमाज टाटीबन्ध के श्री लक्ष्मण प्रसाद वर्मा, डॉ. विद्याकान्त त्रिवेदी, म.द.आर्य उ.मा. विद्यालय के प्राचार्य श्री विनोद सिंह, श्री लोकनाथ आर्य प्रबंधक म.द.सेवाश्रम, टाटीबन्ध, सभा कार्यालय दुर्ग के कर्मचारीगण सहित अनेक आर्यजन उपस्थित रहे। छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा एवं 'अग्निदूत' परिवार वर्मा परिवार को इस असहनीय वेदना को सहन करने की शक्ति प्रदान हेतु परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करती है एवं विनम्र श्रद्धाञ्जलि अर्पित करती है। - *निजी संवाददाता*

आर्यसमाज को समर्पित था स्वामी धर्मेश्वरानन्द जी का जीवन : डॉ. अर्चना प्रिय

मथुरा। संस्कार जागृति मिशन द्वारा ताराधाम कालोनी स्थित कार्यालय में आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री व गुरुकुल पूठ के संस्थापक स्वामी धर्मेश्वरानन्द महाराज जी के आकस्मिक निधन पर शोक व्यक्त कर श्रद्धा सुमन अर्पित किए। मिशन की अध्यक्ष डॉ. अर्चना प्रिय ने कहा कि स्वामी जी का पूरा जीवन आर्यसमाज को समर्पित रहा है। उनके रग-रग में महर्षि दयानन्द के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने की तड़फ थी। उनकी आर्य जगत में हमेशा कमी खलेगी। संरक्षक आचार्य सत्यप्रिय आर्य ने कहा कि स्वामी जी द्वारा आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. का सफलतापूर्वक नेतृत्व किया गया। उनके द्वारा आर्यसमाज के लिए किए कार्य हमेशा याद किए जायेंगे। उनके द्वारा स्थापित गुरुकुल पूठ में आज अनेक बच्चे वैदिक संस्कृति का पठन-पाठन कर रहे हैं, जो उनकी त्याग तपस्या का ही परिणाम है। श्रद्धांजलि देने वालों में सचिव विवेक प्रिय आर्य, उपाध्यक्ष वंदना प्रिय आर्य, प्रचारक लाल सिंह आर्य, रामप्रकाश आर्य, सरोज रानी आर्य, विकास ओम आर्य, नीति प्रिय आर्य, उत्कर्ष प्रताप सिंह आर्य आदि थे।

अग्निदूत के ग्राहक सदस्यों की सेवा में

छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के मासिक मुख पत्र **'अग्निदूत'** के समस्त ग्राहक सदस्यों से निवेदन है कि अपना वार्षिक शुल्क १००/- यथाशीघ्र सभा कार्यालय को भेज दें, जिससे कि उन्हें नियमित रूप से 'अग्निदूत' भेजा जाता रहे। जिन सदस्यों के शुल्क तीन वर्षों से अधिक बकाया हो, उनसे निवेदन है कि वे अपना दसवर्षीय शुल्क ८००/- रु. भेजें। इस कार्य को यथाशीघ्र प्राथमिकता से करें। अन्यथा **इस मास से अग्निदूत भेजना बंद कर दिया जायेगा।** पत्र व्यवहार में अपना सदस्य संख्या तथा पूरा पता पिन कोड सहित अवश्य लिखें। **छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का भारतीय स्टेट बैंक दुर्ग शाखा में सेविंग एकाऊन्ट नं. : 32914130515, आई.एफ.एस.सी. SBIN0009075 कोड नं. अथवा देना बैंक दुर्ग शाखा में सेविंग एकाऊन्ट नं. 107810002857 आई.एफ.एस.सी. BKDN0821078 है, जिसमें आप किसी भी भारतीय स्टेट बैंक/देना बैंक की शाखा से आनलाईन शुल्क जमा कर सभा कार्यालय के दूरभाष नं. 0788-4030972 द्वारा सूचित करते हुए या अलग से पत्र लिखकर अवगत कर सकते हैं। अग्निदूत मासिक पत्रिका के सम्बन्ध में कोई भी शिकायत हो तो कृपया श्रीनारायण कौशिक को चलभाष नं. 9770368613 में** सम्पर्क कर सकते हैं।

- **दीनानाथ वर्मा, मंत्री** मो. 9826363578

कार्यालय पता : 'अग्निदूत', दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग (छ.ग.) **491001, फोन : 0788-4030972**

वैदिक ज्ञान योग एवं वैदिक चिकित्सा गुरुकुलम् बड़ेडोंगर(बेड़गांव) कोण्डागांव जिला में सम्पन्न नवप्रवेशित ब्रह्मचारी एवं ब्रह्मचारणियों का उपनयन संस्कार की झलकियाँ

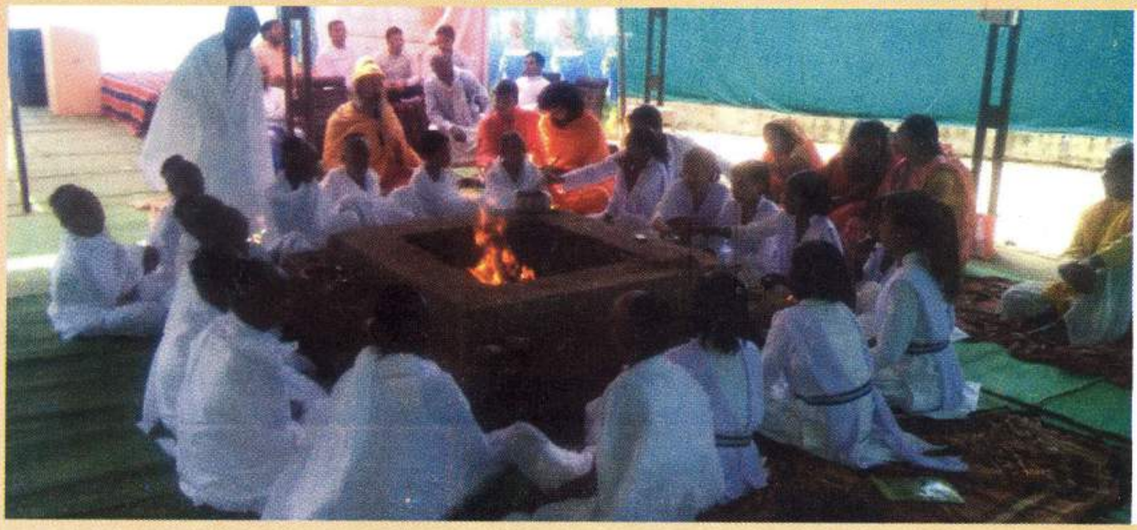

डी.ए.वी. छाल-छाया रहा : क्लस्तर स्तरीय क्रीड़ा स्पर्धा का हुआ आयोजन

CHH-HIN/2006/17407 नवम्बर 2019 डाक पंजी. छ.ग./दुर्ग संभाग/99/2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लायसेंस नं. : TECH/170/CORR/CH-4/2017-18-19

सम्पादक प्रकाशक मुद्रक आचार्य अंशुदेव आर्य द्वारा छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्य नगर, दुर्ग के वैदिक मुद्रणालय से छपवाकर प्रकाशित किया गया।
प्रेषक : 'अग्निदूत', हिन्दी मासिक पत्रिका, कार्यालय-छ.ग. प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्य नगर, दुर्ग (छ.ग.) ४९१००१